दुलारे-दोहावली

सपादक
सर्वप्रथम देव-पुरस्कार-विजेता
श्रीदुलारेलाल
(सुधा-संपादक)

गंगा पुस्तकमाला का १५१वाँ पुष्प

दुलारे-दोहावली

[सर्वप्रथम देव-पुरस्कार-प्राप्त]

प्रणेता

श्रीदुलारेलाल

सखि, जीवन सतरंज-सम,
सावधान ह्वै खेलि,
बस जय लहिबौ ध्यान धरि,
त्यागि सकल रँग-रेलि।

मिलने का पता—
गंगा-ग्रंथागार
३६, लाटूश रोड
लखनऊ

सप्तम संस्करण

सजिल्द १॥)] १९४० [सादी १)

अपनी सबसे प्रिय वस्तु
सबसे प्रिय दिवस
की
सबसे प्रिय घड़ी पर
सबसे प्रिय
कुसुम-करों
में

वसत-पचमी
(मध्याह्न)
१९९६

प्रमाण-पत्र

मैंने दो हज़ार मुद्रा २०००) वार्षिक का जो 'देव-पुरस्कार' स्थापित किया है, उसके नियमानुसार इस वर्ष ब्रजभाषा-काव्य के सर्वश्रेष्ठ नवीन ग्रंथ पर उक्त पुरस्कार मिलना था। मुझे इस प्रमाण-पत्र द्वारा यह घोषित करने मे परम प्रसन्नता है कि इस वर्ष का पुरस्कार निर्णायकों द्वारा लखनऊ-निवासी श्रीयुत पंडित दुलारेलालजी को, उनके 'दुलारे-दोहावली'-नामक उत्तम ग्रंथ के कारण, समर्पित किया गया है।

मै आशा करता हूँ कि उनके द्वारा हिंदी की और भी सराहनीय सेवाएँ हो सकेगी। मै उन्हे अपनी, ओरछा-राज्य एवं हिंदी-संसार की ओर से हार्दिक बधाई देता हूँ।

वीरसिंहदेव

टीकमगढ़, मध्य-भारत
वीर-वसंतोत्सव (सवत् १९९१)
६ । २ । १९३५

हिज़ हाइनेस
श्रीसवाई महेंद्र महाराजा ओरछा
सरामद-राज हाय-बुँदेलखंड

[सप्तम सस्करण पर]

'दुलारे-दोहावली' का प्रथम सस्करण जब निकला था, तभी मैंने—कुछ डरते हुए—लिखा था कि यह 'सर्वोत्तम कोटि' की कविता है। 'डरते हुए' इसलिये कि 'पंडित' प्राय हिंदी से अनभिज्ञ समझे जाते है। ऐसी दशा मे हिंदी-ससार के दिग्गजो द्वारा गर्हित भाषा में लिखे हुए काव्य को सराहनीय ही नही, पर 'सर्वोत्तम' कह देना एक निरे पडित के लिये परम दुस्साहस कहा जा सकता है।

पर आज यह जानकर हर्ष है कि हिंदी पढ़नेवालो ने इस 'दोहावली' को इतना अपनाया है कि इसका सातवॉ संस्करण निकल रहा है। इसी प्रसग में फिर से इन दोहो पर दृष्टि-पात करने का अवसर मिला है। आज भी इनको पढने से जो आनद—ब्रह्मास्वाद-सहोदर—अनुभूत हो रहा है, सो पहले से भी अधिक है। यही प्रमाण इसके 'उत्तम काव्य' होने का है—

> "क्षणे क्षणे यन्नवतामुपैति
> तदेव रूप रमणीयताया।"

और काव्य का लक्षण भी पडितराजोक्त ही मनोरम है—"रमणीयार्थप्रतिपादक शब्दः काव्यम्"—"रमणीयता च लोको-

त्तरचमत्कारकारिता"। "लाभाल्लोभोऽभिजायते"—इन दोहों के तो ७ संस्करण हो गए। अब कवि और अधिक 'परिणत-प्रज्ञ' हो गए हैं। इस 'परिणता प्रज्ञा' के भी उद्गार अवश्य होते होंगे। आशा है, ये भी प्रकाशित होकर दृष्टिगोचर होंगे।

जॉर्ज-टाउन, प्रयाग
१। २। ४०

गंगानाथ झा

विज्ञप्ति

[प्रथम संस्करण पर]

हिंदी-संसार में महाकवि बिहारीलाल की कितनी ख्याति है, यह किसी हिंदी-भाषा के जानकार से छिपा नहीं। कितने ही विद्वान् समालोचकों का मत है कि वह हिंदी के सर्वश्रेष्ठ कलाकार हैं। उनके बाद आज तक किसी ने भी वैसा चमत्कार नहीं पैदा किया था, परंतु यह कलंक अब दूर होने को है। अभी कुछ ही विद्वान् ऐसी सम्मति रखते हैं कि सुधा-संपादक कविवर श्रीदुलारेलालजी के दोहे महाकवि बिहारीलाल के दोहों की टक्कर के होते हैं, और बाज-बाज ख़ूबसूरती में बढ भी गए हैं, परंतु यह निस्संदेह कहा जा सकता है कि अचिर भविष्य में, जब कविवर श्री-दुलारेलालजी भार्गव के भी कई सौ ऐसे ही दोहे प्रकाशित हो जायँगे, लोगों को उनकी श्रेष्ठता का लोहा मानना होगा। कहा जाता है, ब्रजभाषा में अब पहले की-सी कविता नहीं लिखी जाती, परंतु 'दुलारे-दोहावली' ने इस कथन को बिलकुल भ्रम साबित कर दिया है। हिंदी के वर्तमान कवियों और समालोचकों में जो अग्रगण्य माने जाते हैं, उनमें से कोई-कोई मुक्त कंठ से स्वीकार करते हैं कि कविवर श्रीदुलारेलाल वर्तमान समय में ब्रजभाषा के सर्वश्रेष्ठ कवि हैं, और उनकी

दोहावली ब्रजभाषा-साहित्य की वर्तमान सर्वोत्तम कृति। इसकी ब्रजभाषा की कोमल-कांत पदावली, शृंगार और करुण-रस के कोमलतम मनोभावों की मंजुल, सजीव कल्पना-मूर्तियाँ, वीर-रस की ओजस्विनी सूक्तियाँ, देश-प्रेम का छलकता हुआ प्याला, शांत-रस की सुधा-धारा, रसानुकूल अलंकृत भाषा का मुहावरेदार प्रयोग और संक्षेप में कहने का अद्भुत कौशल आदि एक ही जगह देखकर जी प्रसन्न हो जाता है। निस्संदेह कविवर श्रीदुलारेलालजी ऐसी रचनाओं के लिये हम साहित्यिकों के धन्यवाद के पात्र हैं।

चैत्र कृष्ण १,
१९९१ } सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला'

भूमिका

ब्रजभाषा मे नवीन प्रगति

हर्ष का विषय है, भारतेंदु के बाद ब्रजभाषा पर जो आपत्ति के बादल छा गए थे, वे अब धीरे-धीरे हट रहे है। भारतेंदु के बाद हम ब्रजभाषा-साहित्य की रचना का ह्रास देखते है। यद्यपि उसमे प० बद्रीनारायण चौधरी 'प्रेमघन', राय देवीप्रसादजी 'पूर्ण', श्रीबालमुकुंद गुप्त, पं० श्रीधर पाठक, श्रीसत्यनारायण 'कविरत्न', प० नाथूरामशंकर शर्मा 'शकर', श्रीजगन्नाथदास 'रत्नाकर', श्रीसनेहीजी, प० रामचद्र शुक्ल, श्रीवियोगी हरि, स्व० श्रीअजमेरीजी, प० अयोध्यासिहजी उपाध्याय, प० जगन्नाथप्रसाद चतुर्वेदी, प्रो० रामदासजी गौड आदि की उत्कृष्ट रचनाएँ हुई अवश्य, पर पत्रकारो एव खड़ी बोली के प्रचारकों ने सघटित आदोलन करके ब्रजभाषा का विरोध किया, जिससे ब्रजभाषा दब-सी गई थी। पर हिंदी-साहित्य मे श्रीदुलारेलालजी के सराहनीय प्रयत्न से, 'माधुरी' के निकलते ही, ब्रजभाषा की लता पुन. लहलहाने लगी। यद्यपि यह सत्य है कि अनेक विद्वान् ब्रजभाषा-सेवियो ने इधर भी ब्रजभाषा की श्री-वृद्धि करने मे विशेष योग दिया है, पर श्रीदुलारेलालजी का प्रयत्न अनेक कारणो से इन सबकी अपेक्षा अधिक महत्त्व-पूर्ण रहा है। कारण, आप ब्रजभाषा-साहित्य के प्रचारक तथा प्रकाशक ही नही, श्रेष्ठ कलाकार भी है। साथ ही आप खड़ी बोली के भी वैसे ही समर्थक है। अतएव आप हिंदी-माता के ऐसे सपूत हैं, जो प्राचीन और नवीन दोनो धाराओं के ज़बर्दस्त हिमायती और प्रचारक है। आप हिंदी के उन महानुभावों मे से है, जो रात-दिन लगन के साथ राष्ट्र-भाषा हिंदी के उत्थान मे सतत प्रयत्नशील रहते हैं।

कविवर श्रीदुलारेलाल

श्रीदुलारेलालजी का जन्म लखनऊ के सुप्रसिद्ध, सुप्रतिष्ठित, धनी नवलकिशोर-कुल के यशस्वी श्रीमान् प्यारेलालजी के यहाँ हुआ था। आप उनके ज्येष्ठ पुत्र है। आपका लालन-पालन उर्दू के अजेय दुर्ग लखनऊ मे हुआ। जिस नवलकिशोर-प्रेस ने उर्दू-फ़ारसी की ४००० पुस्तके प्रकाशित की है, वही आपका बचपन बीता है। पर आपसे तो हिंदी की अक्षय सेवा का कार्य होना था। यद्यपि आपका परिवार उर्दू की ओर प्रधावित था, पर आपने अपने बालपन मे ही अपना एक निश्चित मार्ग ग्रहण कर लिया था। आपकी माताजी तुलसी-कृत रामायण और पुराणो का नियमित रूप से पाठ किया करती थी। इसलिये उनके हिंदी-प्रेम मे प्रभावित होकर इनको हिंदी के प्रति बाल्यकाल से ही अनुराग हो गया था, और आप उनकी अनुपस्थिति मे उनके ग्रथ चुपचाप पढ़ा करते थे। यह हिंदी-प्रेम अवस्थानुसार धीरे-धीरे बढ़ता गया। आप स्कूल और कॉलेज मे अध्यापकों द्वारा उच्च कोटि के प्रतिभाशाली विद्यार्थी समझे जाते थे। दर्जे मे प्रथम आने के कारण आपको अनेक छात्रवृत्तियाँ (वज़ीफ़े) और स्वर्ण-पदक मिले। अँगरेज़ी मे प्रांत-भर मे प्रथम आने के कारण आपको नेस्फ़ील्ड*-स्कॉलरशिप भी मिला। आपकी अँगरेज़ी इतनी अच्छी थी कि आपके शुभचिंतको की इच्छा थी कि आप आई० सी० एस्० पास करके गवर्नमेंट के ऊँचे-से-ऊँचे पद ग्रहण करे।

किशोरावस्था में पदार्पण करते ही आपका विवाह अजमेर के प्रसिद्ध रईस श्रीमान् फूलचदजी जज की सुपुत्री श्रीगंगादेवी से हुआ। हमारे होनहार महाकवि को श्रीगंगादेवी के रूप में बाह्य और

---

* युक्तप्रांत मे कभी यह शिक्षा-विभाग के डाइरेक्टर थे। इनकी लिखी अँगरेज़ी-व्याकरण प्रसिद्ध है।

आभ्यतर सौंदर्य-निधि की प्राप्ति हुई थी। कहते है, इस स्वर्गीया देवी को जैसा अपार सौंदर्य मिला था, वैसा ही हृदय-सौंदर्य भी। ऐसा मणि-काचन-सयोग बिरले ही पुण्यवान्, भाग्यशाली मनुष्य को प्राप्त होता है। इन देवी मे अनेक गुणों के साथ-साथ हिंदी के अनन्य प्रेम का सबसे बड़ा गुण था। इस सत्सग को पाकर दुलारेलालजी की हिंदी-हित की कामना-बेलि दिन-दूनी रात-चौगुनी बढने लगी, और आपने अपने सोलहवे वर्ष मे भार्गव-पत्रिका का सपादन-भार अपने कोमल कधो पर ले लिया। आपके सपादन के पूर्व भार्गव-पत्रिका उर्दू मे निकलती थी, पर आपके हाथ मे आते ही वह राष्ट्र-भाषा हिंदी मे निकलने लगी। उसमे हिंदी के अच्छे-अच्छे कवि और लेखक भी लेख देते थे।

दुर्दैव-वश दो ही तीन मास पति के साथ रहकर सौभाग्यवती श्रीगगादेवी परलोक सिधारी। इस आघात से दुलारेलालजी की जीवन-धारा में एक महत् परिवर्तन हो गया। नवलकिशोर-प्रेस के तत्कालीन अध्यक्ष रायबहादुर श्रीमान् प्रयागनारायणजी भार्गव, जो आपके बाबा* होते थे, और भार्गव-परिवार मे सबसे ज्येष्ठ थे, आपसे बड़ा स्नेह रखते थे। वह अपने परिवार का इनको उज्ज्वलतम रत्न समझते थे। उनकी भी इच्छा थी कि आप आई० सी० एस्० पास करने के लिये विलायत जायँ, किंतु आपने सरकारी नौकरी करना बिलकुल पसद नही किया, और अपनी प्राणेश्वरी पत्नी की इच्छा की पूर्ति के लिये हिंदी की महान् सेवा करने का बीड़ा उठाया। श्रीमती गंगादेवी अपना पांचभौतिक तन त्यागकर, पति की आत्मा मे लीन होकर हिंदी का इतना भारी उपकार करेगी, यह कौन

---

* आपके परबाबा श्रीमान् फूलचदजी के श्रीमान् नवलकिशोरजी सी० आई० ई० छोटे भाई थे। सो नवलकिशोरजी के पुत्र श्रीमान् प्रयागनारायणजी आपके बाबा होते थे।

जानता था ? प्रेमी हृदय पर इस घटना का यह प्रभाव पड़ा कि दुलारेलालजी उसी समय से अविवाहित रहकर हिंदी-सेवा में निरत रहे। पत्नी के प्रति पति का ऐसा प्रगाढ़ प्रेम बीसवीं सदी में बहुत कम देखने में आता है। अगर वह आई० सी० एस्० होकर विलायत से लौटते, तो किसी ज़िले में पडे दिन काटते, और हिंदी उनकी इस अमूल्य सेवा से वंचित ही रह जाती ! अस्तु।

आपने अपनी सती-साध्वी धर्मपत्नी स्वर्गीया गंगादेवी के मरणोपरांत उनकी पुण्य स्मृति में, वसंत-पंचमी के दिन, 'गंगा-पुस्तक-माला' प्रारंभ की। इस माला का पहला पुष्प था माला के संपादक, संचालक और स्वामी श्रीदुलारेलालजी-रचित 'हृदय-तरंग'-नामक ग्रंथ। इसे आपने अपनी स्वर्गीया प्रिय पत्नी को समर्पित किया। इसके बाद तो फिर 'गंगा-पुस्तकमाला' में राष्ट्र-भाषा हिंदी का गौरव बढ़ानेवाली प्रत्येक विषय की श्रेष्ठ पुस्तकें निकलीं, जिनसे हिंदी-साहित्य की विशेष श्री-वृद्धि हुई है। इन सब पुस्तकों को आपने स्वयं ही घोर परिश्रम से संपादित करके सुंदरता से प्रकाशित किया है। इसी के साथ-साथ हिंदी के इस यशस्वी सपूत ने अपने प्रिय बालसखा और चचा श्रीविष्णुनारायणजी भार्गव के सहयोग से 'माधुरी' को निकालकर तथा उसका सुचारु रूप से संपादन करके हिंदी की गति-विधि ही बदल दी। उसी समय से हिंदी के मासिक साहित्य में अभूतपूर्व सुधार हुआ, जिसका भारी श्रेय श्रीदुलारेलालजी को है। 'माधुरी' को योग्य हाथो में सौंपने के बाद हिंदी के इस लाड़ले लाल ने 'सुधा'-पत्रिका को जन्म दिया। 'सुधा' का संपादन भी आपने अपने ही हाथों में रक्खा, और आज तक आप ही के हाथों में है। 'सुधा' हिंदी-संसार की प्रथम श्रेणी की पत्रिकाओं में अग्रगण्य रही है, और है। इसका संपादन उच्च कोटि का होता है। इन दोनो सर्वश्रेष्ठ पत्रिकाओं के संपादन में आप जहाँ प्राचीन, प्रतिष्ठित साहित्य-सेवियों का

सम्मान करते आए है, वहाँ नवीन, योग्य साहित्य-सेवियों को प्रबल प्रोत्साहन भी देते आए हैं। अनेक युवक युवतियों को बढ़ावा दे-देकर आपने उनसे लेख और ग्रंथ लिखवाए है। इस प्रकार आपने जहाँ स्वयं हिंदी की सेवा की है, वहाँ दूसरो से भी हिंदी-सेवा का कार्य लिया है, सैकड़ो लेखक-लेखिकाओ को साहित्य-साधना का सुंदर मार्ग दिखाया है। इनके समान हिंदी-हितैषिता बिरले लोगो मे ही मिलेगी, फिर इतनी सेवा तो दुर्लभ है।

यद्यपि आपने खड़ी बोली मे भी सुंदर, रसीली, भाव-पूर्ण कविता की है, पर आपकी कविता प्रधानतया ब्रजभाषा मे मुक्तको के रूप मे ही देखी गई है। अब आपकी कविता के विषय मे कुछ लिखने के पूर्व मैं आपके संपादन तथा प्रकाशन-कार्य की प्रशसा के विषय मे कुछ अग्रगण्य विद्वानों की सम्मतियाँ उपस्थित करता हूँ—

सुप्रसिद्ध हिंदी-हितैषी डॉक्टर सर जॉर्ज ग्रियर्सन के० सी० एस्० आई०, पी-एच्० डी० महोदय—

"A new series of editions of Hindi classical works has lately been projected under the title of the Sukavi Madhuri Mala The general editor of the series is Shri Dulareylal Bhargava well-known in Northern India as the Editor-in-Chief of the excellent Hindi Magazine, the Sudha In this series he proposes to offer to the public critically prepared editions of the master pieces of Hindi Literature with careful and full commentaries

The publisher and the general editor may be congratulated on beginning this series so

auspiciously and it is to be hoped that the other works to be included in it will reach the same standard of scholarship."

संस्कृत के प्रकांड विद्वान् प्रोफ़ेसर रामप्रतापजी शास्त्री (नागपुर-विश्वविद्यालय के संस्कृत-हिंदी-प्राकृत-पाली-विभाग के अध्यक्ष)—

"The Ganga Pustak Mala Karyalaya is one of the best Publishing Institutions in India It has played an important part in the evolution of modern Hindi Literature.

It has recently made tremendous progress under the efficient management of its young and energetic Proprietor Mr Dulareylal Bhargava, an accomplished Poet, Prose-writer and the Editor of the best Hindi Monthly '*Sudha*'

Mr. Dulareylal Bhargava has undoubtedly laid the Hindi-speaking world under a deep debt of gratitude by his selfless services and he will go down to posterity as the most successful Publisher He has revolutionised Hindi printing and publishing in so short a time."

आचार्य पं० महावीरप्रसादजी द्विवेदी—बहुत-सी महत्त्व-पूर्ण और मनोरंजक पुस्तकें प्रकाशित करके गंगा-पुस्तकमाला के मालिक हिंदी-साहित्य की अभिवृद्धि में विशेष सहायक हुए हैं। उनके पुस्तक-प्रकाशन का यह क्रम यदि इसी तरह चलता रहा, तो भविष्य में यह अभिवृद्धि अधिकाधिक वृद्धिगत होती रहेगी।

सुप्रसिद्ध इतिहास-लेखक और कवि श्रीमान् 'मिश्रबंधु'—

आपसे हिंदी का जैसा उपकार हुआ और हो रहा है, वैसा भारतेंदु हरिश्चंद्र के पीछे केवल इने-गिने महानुभावों द्वारा हो सका है। हम आशा करते हैं कि आगे चलकर आप हिंदी का और भी विशेष हित-साधन कर सकेंगे।

छायावाद के श्रेष्ठ कवि पं० सूर्यकांतजी त्रिपाठी 'निराला'—श्रीदुलारेलालजी भार्गव ने हिंदी की जो सेवा की है, उसका मूल्य निर्द्धारित करना मेरी शक्ति से बिलकुल बाहर है। 'माधुरी' और 'सुधा' में बराबर आप नवीन लेखकों को प्रोत्साहित करते रहे हैं, कितनी ही महिला-लेखिकाएँ तैयार कीं। यह क्रम हिंदी की किसी भी पत्रिका में नहीं रहा। इस प्रोत्साहन-कार्य में भार्गवजी का स्थान सबसे पहले है। लखनऊ-जैसे उर्दू के किले में इस तरह हिंदी का विशाल प्रासाद खड़ा कर देना कोई साधारण-सी बात नहीं थी। इसके लिये कितना परिश्रम तथा कितना अध्यवसाय चाहिए, यह मर्मज्ञ मनुष्य अच्छी ही तरह समझ लेंगे।

हिंदी के सर्वश्रेष्ठ गद्य-लेखक आचार्य चतुरसेनजी शास्त्री—भार्गवजी आधुनिक हिंदी के दुलारे-युग के प्रवर्तक, व्रजभाषा के सर्वश्रेष्ठ कवि, सफल संपादक, लोकप्रिय प्रकाशक तथा सुप्रसिद्ध मुद्रक हैं। आप देव-पुरस्कार के सर्वप्रथम विजेता हैं। गंगा-पुस्तकमाला, माधुरी, सुधा, गंगा-फाइनआर्ट-प्रेस, गंगा-ग्रंथागार, गंगा-कैलेंडर-मैनुफ़ैक्चरिंग-कंपनी आदि के संस्थापक हैं। गत कुछ वर्षों के अल्पकाल में ही आपने हिंदी की जैसी उन्नति कर दिखाई है, वह बेजोड़ है। आपके काव्य-ग्रंथ 'दुलारे-दोहावली' पर जितनी आलोचना-प्रत्यालोचना हिंदी में हुई है, उतनी हिंदी के इतिहास में, इतने थोड़े समय में, किसी भी ग्रंथ पर नहीं हुई। यही कारण है कि थोड़े काल में ही उसके अनेक संस्करण हो चुके हैं। आप लखनऊ के सुप्रसिद्ध श्रीनवलकिशोर सी० आई० ई० के वंश के हैं, जिन्होंने

हिंदी-साहित्य की अनुपम सेवा करके और उसी की बदौलत एक करोड रुपया पैदा करके अपना जन्म धन्य और जीवन अमर कर लिया।

आप अनेक बार अनेक सभाओ और समाजो द्वारा निमंत्रित होकर सभापति का पद सुशोभित कर चुके है। सयुक्तप्रातीय साहित्य-सम्मेलन के सप्तमाधिवेशन के सभापति के पद से आपने गुरुकुल कागडी मे जो भाषण किया था, वह महत्त्व-पूर्ण है। आपका सिंध-साहित्य-सम्मेलन का संभाषण भी हिंदी की हित-कामना से ओत-प्रोत एवं सुदर हुआ है। ग्वालियर-हिंदी-साहित्य-सम्मेलन के अवसर पर अखिल भारतीय हिंदी-कवि-सम्मेलन ने आपकी कविता पर मुग्ध होकर उपस्थित कवियो मे आपको प्रथम पुरस्कार दिया, जिसे आपने स्वय न लेकर प० पद्मकातजी मालवीय को, जिनका नबर दूसरा था, दिलवा दिया। प्रयाग में, द्विवेदी-मेला के समय, हास-परिहास के रगमच पर, अनेक कटाक्षों के उत्तर मे आपकी मीठी हास्यमयी रचना ने सब उपस्थित सज्जनो को प्रसन्न किया था। उससे प्रकट होता है कि आप समय पर, तुरत ही, मनोहर, चुटीली रचना करने मे भी समर्थ है। हिंदू-विश्वविद्यालय, लखनऊ-विश्वविद्यालय आदि शिक्षा-संस्थाओं मे भी कवि-सम्मेलन और वाद-विवादो मे सभापति का भार वहन करते हुए आप विद्यार्थियो मे हिंदी-प्रेम जाग्रत् करते रहे है। सप्तम संयुक्त-प्रांतीय कवि-सम्मेलन के सभापति का पद भी आप मेरठ में सुशोभित कर चुके है। परसाल कलकत्ता पधारने पर वहाँ के साहित्य-सेवियों ने आपका अभिनंदन किया था। आप प्रकृति से पर्यटनशील हैं। कश्मीर, पजाब, राजपूताना, सी० पी०, यू० पी०, बुंदेलखंड, मध्य-भारत आदि आपका खूब घूमा हुआ है। इससे आपका अनुभव बहुत बढ़ा है, जो एक सुकवि के लिये अपेक्षित है। आप

मिलनसार और प्रेमी सज्जन है। आपके सामाजिक विचार अत्यत उदार है। न तो आप प्राचीन भारतीय सभ्यता का सर्वथा नाश ही चाहते है, और न प्राचीनता की रूढियो से जकडे रहकर प्रगतिशील समय से सर्वथा पीछे रह जाना ही पसद करते है। तात्पर्य यह कि आप प्राचीन और नवीन का ऐसा समन्वय चाहते है, जो विश्व-कल्याण-कारी हो। आप विभिन्न विचार-प्रणालियो को मानव-जीवन के विकास के लिये श्रेयस्कर समझकर उन सबका आदर करते है। आप जाति-पॉति मे विश्वास नही रखते। हिदू-जाति के सगठन और स्वराज्य-प्राप्ति के लिये आप अतरजातीय विवाह को आवश्यक ही नही, अनिवार्य समझते है। आप साप्रदायिकता से भी दूर रहते है। सुधा और गंगा पुस्तकमाला के सपादन तथा प्रकाशन और गगा-फ़ाइनआर्ट-प्रेस तथा गगा-ग्रथागार के सचालन से अव-काश मिलने पर, स्फूर्ति होने पर, आप काव्य की रचना भी करते आए है। आप थोडा, किंतु अच्छा लिखने की नीति के कायल है।

दुलारे-दोहावली

कविवर प० दुलारेलालजी भार्गव की इस श्रेष्ठ रचना 'दुलारे-दोहावली' मे सब मिलाकर २०८ दोहे है। प्रारभ मे, प्रार्थना-शीर्षक मे, आठ दोहे है। इसके बाद मुख्य ग्रंथ प्रारभ होता है। इन दोहा-रत्नो को कवि ने यत्र-तत्र बिखेरकर रक्खा है।

'दुलारे-दोहावली' जिस रचना-प्रणाली पर लिखी गई है, उसके अनुसार यह साहित्य-शास्त्र की दृष्टि से एक 'कोष' है, जिसमे २०८ दोहा-रत्न यत्र-तत्र अपने ही आपमे पूर्ण रहकर अपनी कमनीय काति प्रदर्शित कर रहे है। साहित्य-शास्त्र मे विवेचको ने ऐसे 'पद्य-रत्न' को 'मुक्तक' कहा है। पद्यात्मक काव्य के प्रधानतया दो भेद है—(१) प्रबध-काव्य और (२) मुक्तक-काव्य। प्रबंध-काव्य में कवि एक विस्तृत कथानक का आश्रय लेकर काव्य-रचना करने के लिये एक

विशाल क्षेत्र चुन लेता है। उसे काव्य-सामग्री को एक विस्तृत क्षेत्र में यथास्थान भर देने की पूर्ण स्वतंत्रता रहती है। उसका काम अभिधा से निकल जाता है, और कथानक की रोचकता के कारण उसमें मनोरमता रहती है। मुक्तककार का क्षेत्र बहुत ही संकीर्ण रहता है, उसी में उसे अपना संपूर्ण कथानक ध्वनि से, गंभीर अर्थ-पूर्ण शब्दों में, झलकाना पड़ता है। जहाँ प्रबंध-काव्य में छंद शृंखला-संबद्ध रहने के कारण आगे-पीछे के पद्यों का सहारा लेकर अपनी रक्षा कर सकते हैं, वहाँ मुक्तक-छंद को स्वतंत्र रूप से एकाकी रहकर अपना गौरव पूर्ण प्रबंध के सामने स्थापित करना पड़ता है। इसीलिये खंड काव्य, महाकाव्य आदि लिखने की अपेक्षा मुक्तक लिखना महत्त्व-पूर्ण है।

यह सत्य है कि मुक्तक की रचना काव्य-कला-कुशलता का चरम आदर्श है। एक पूरे प्रबंध (ग्रंथ) में कवि को विस्तृत कथानक का आश्रय लेकर रस-स्थापना का जो कार्य करना पड़ता है, वही कार्य एक छोटे-से मुक्तक में कर दिखाना विलक्षण काव्य-रचना-सामर्थ्य की अपेक्षा रखता है। कथानक का विस्तृत वर्णन न करके अर्थात् उसका आश्रय न लेकर एक छोटे-से छंद में इतना रस भर देना कि रसिक अगली-पिछली कथा का आश्रय लिए बिना ही उसके आस्वादन से तृप्त हो जाय, सचमुच में असाधारण प्रतिभा का काम है। एक ही स्वतंत्र पद्य में विभाव, अनुभाव और संचारी भावों से परिपूर्ण रस का सागर लहराना, एक संपूर्ण आख्यायिका को थोड़े-से ध्वन्यात्मक शब्दों में भर दिखाना, कथन-शैली में एक निराला बाँकपन—एक निराला चमत्कार पैदा करना, उपमान-उपमेयों द्वारा समान दृश्य दिखलाकर भाव-साधर्म्य अथवा भाव-वैधर्म्य के आलंकारिक वेष को सजाना और सबके ऊपर देश-काल-पात्र के अनुकूल, स्वाभाविक प्रवाहमयी, आलंकारिक और मुहावरेदार, अर्थमयी, नपी-तुली, भावानुकूल, प्रांजल भाषा का सहज-सुकुमार प्रयोग करना सचमुच भारी क्षमता

का काम है। मुक्तक की रचना प्रधानतया व्यंग्य-प्रधान उत्तम काव्य में होती है। मानव-स्वभाव का सूक्ष्मातिसूक्ष्म विश्लेषण करना और प्रकृति-पर्यवेक्षण एवं प्रकृति की अनुभूति के साथ गहन से-गहन निगूढ़ रहस्यो का उद्घाटन करना मुक्तकों की रचना का आदर्श होता है। विद्वद्वर पंडित पद्मसिंह शर्मा ने ठीक ही लिखा है—

"मुक्तक की रचना कविता-शक्ति की परा काष्ठा है। महाकाव्य, खंड काव्य या आख्यायिका आदि मे यदि कथानक का क्रम अच्छी तरह बैठ गया, तो बात निभ जाती है। कथानक की मनोहरता पाठक का ध्यान कविता के गुण-दोष पर नही पडने देती। कथा-काव्य मे हज़ार मे दस-बीस पद्य भी मार्के के निकल आए, तो बहुत हैं। कथानक की सुंदर सघटना, वर्णन-शैली की मनोहरता और सरलता आदि के कारण कुल मिलाकर काव्य के अच्छेपन का प्रमाण-पत्र मिल जाता है। परतु मुक्तक की रचना मे कवि को गागर मे सागर भरना पडता है। एक ही पद्य मे अनेक भावो का समावेश और रस का सन्निवेश करके लोकोत्तर चमत्कार प्रकट करना पडता है। इसके लिये कवि का सिद्ध सारस्वतीक और वश्यवाक् होना आवश्यक है। मुक्तक की रचना में कवि को रस की अक्षुण्णता पर पूरा ध्यान रखना पडता है, और यही कविता का प्राण है।"

(सतसई संजीवन-भाष्य, भू० भा०)

यद्यपि यथार्थ मे रसमय काव्य ही काव्य है, पर कुछ ऐसे काव्य भी लिखे जाते हैं, जो नीति एवं धर्म आदि के उपदेश को प्रधानतया प्रतिपादित करनेवाले होते है। इनमे बहुधा रस का अभाव रहता है, सुभाषित-मात्र इनमे रहता है, जिसमे केवल वाग्वैदग्ध्य का चमत्कार होता है। मुक्तक भी इस पर बहुतायत से लिखे जाते है। ऐसे सूक्ति-प्रधान मुक्तकों की रचना नीति और धर्म आदि के उपदेश देने के उद्देश्य से की जाती है। इनमे भी कथन शैली का बाँकपन और शब्द-चमत्कार

का समावेश होना आवश्यक होता है, क्योंकि इनके विना सूक्ति-प्रधान उत्तम मुक्तक नही रचे जा सकते। रस को छोड़कर अन्य काव्यागों का समुचित समावेश इनमें अत्यंत संक्षेप मे करना पडता है।

काव्य की अभिव्यक्ति सर्वोत्कृष्टतया व्यंग्य में होती है, इसीलिये अनेक साहित्य रीति-ग्रथकार, महामति विवेचका ने व्यंग्य-प्रधान काव्य को श्रेष्ठता दी है। बहुत-से आचार्य और आगे बढ गए है, रस की अभिव्यक्ति के लिये भी सबल होने के कारण ध्वनिमय व्यग्य को काव्य की आत्मा घोषित किया है। इस प्रकार की रस-ध्वनि-पूर्ण काव्य-रचना करनेवाले ही महाकवि कहलाते है। यह व्यग्य काव्य मे ध्वनि मे उसी प्रकार झलकता है, जिस प्रकार अंगना का लावण्य उसके सुंदर शरीर से। धुरधर काव्य-मर्मज्ञ आनंदवर्द्धनाचार्य लिखते है—

प्रतीयमान पुनरन्यदेव
वस्त्वस्ति वाणीषु महाकवीनाम् ,
यत्तत्प्रसिद्धावयवातिरिक्त
विभाति लावण्यमिवागनासु। (ध्वन्यालोक १।४)

"महाकवियो की वाणी में वाच्य अर्थ के अतिरिक्त प्रतीयमान अर्थ एक ऐसी चमत्कारक वस्तु है, जो अंगना के अग में हस्तपादादि प्रसिद्ध अवयवो के अतिरिक्त लावण्य की तरह चमकती है।"

दुलारे-दोहावली के मुक्तक

इस प्रकार के मुक्तक और वे भी रस, ध्वनि और भावानुगामिनी उत्कृष्ट काव्य-भाषा से युक्त, दुलारे-दोहावली में, यत्र तत्र बिखरे हुए देख पड़ते हैं। यद्यपि ऐसा जान पड़ता है कि दोहावली मे आदि से अंत तक कोई क्रम नहीं, क्योंकि प्रत्येक पद्य मुक्तक होने से स्वतत्र है, फिर भी विषय-विचार की दृष्टि से दुलारे-दोहावली में क्रम है, जो ध्यान से देखने पर मालूम हो जायगा। दोहावली के ये दोहे भाषा और भाव की दृष्टि से परमोत्कृष्ट हुए हैं। 'सूक्ति' के दोहे भी

बडे चुटीले और अनूठे काव्य के उदाहरण हैं। उनमे भी कथन-शैली के तीखेपन के साथ मधुर कसक-पूर्ण बॉकपन पाया जाता है। इस दोहावली को सूक्ष्म तथा गहन दृष्टि से देखने पर गागर में सागर दिखलाई पडने लगता है। इतने विषयो को, इतने थोडे मे, इतने अनूठे ढग से, सरल काव्य मे लिखना और उसमें भी ऐसा कुछ लिख जाना, जो बडे-बडे विद्वान् व्यक्ति भी न लिख सके थे, सचमुच असाधारण प्रतिभा का काम है। हमारे दोहावलीकार ने ऐसा ही किया है।

गागर मे सागर

इस एक ही छोटे काव्य-कोष मे इतना भर देना यह सिद्ध करता है कि इसके पूर्व रचयिता ने बहुत कुछ देखा-भाला है, और उसका हृदय असख्य अनुभूतियो का आगार बन चुका है। इसमे कवि ने जिस विषय को उठाया है, उसका बड़ा ही सच्चा, अनुभूत, हृदयग्राही और भावमय चित्र, अत्यत मनोरम, भावानुगामिनी भाषा में, उपस्थित कर दिया है। सजीव कल्पना मूर्तियो द्वारा शाश्वत प्रकृति के अतरग और बहिरग का रमणीय वर्णन साहित्य-शास्त्रानुमोदित उत्कृष्ट कवि-कौशल से करने मे दुलारे-दोहावलीकार को अभिनदनीय सफलता मिली है। विशुद्ध भारतीय भावनाओ को मानव-प्रकृति को ग्राह्य, विशद कलात्मक रीति से उपस्थित करने मे कवि का कौशल देखते ही बन पडता है। इस काव्य-कोप मे ऐसे-ऐसे अनमोल मुक्तक-रत्न है, जिनका मूल्य ऑकना बडे-बडे जौहरियो का ही काम है। इसमे कवि का प्रकृति-पर्यवेक्षण और विशाल अनुभव स्पष्टतया परिलक्षित होता है।

दोहावली मे काव्याग

दुलारे-दोहावली मे अनेक काव्यागो के बहुत ही प्रकृष्ट और विशुद्ध उदाहरण पाए जाते है। यहाँ कुछ का उल्लेख करना अप्रा-

सगिक न होगा। निम्न-लिखित उदाहरणों से कवि का काव्य-रीति का मार्मिक ज्ञाता होना सूचित होता है। निम्न-लिखित उद्धरणों में लाक्षणिक पद्धति का मनोमोहक चमत्कार दर्शनीय है —

कलहांतरिता—

नाह-नेह-नभ तें अली, टारि रोस कौ राहु—
पिय-मुख-चंद दिखाहु प्रिय, तिय-कुमुदिनि बिकसाहु।

वय-संधि—

देह-देस लाग्यौ चढन इत जोबन-नरनाह,
मदन-चपलई उत लई जनु दृग-दुरग-पनाह।

विरह-निवेदन—

झपकि रही, धीरें चलौ, करौ दूरि तें प्यार,
पीर-दब्यो दरकै न उर चुंबन ही के भार।

प्रवत्स्यत्पतिका—

तन-उपबन सहिहै कहा बिछुरन-झंझाबात,
उड़्यौ जात उर-तरु जबै चलिबे ही की बात?

आगतपतिका—

मुकता सुख-अँसुआ भए, भयो ताग उर-प्यार,
बरुनि-सुई तें गूँथि दृग देत हार उपहार।

व्यतिरेक—

दमकति दरपन-दरप दरि दीपसिखा-दुति देह;
वह दृढ इकदिसि दिपत, यह मृदु दस दिसनि, स नेह।

असंगति—

लरे नैंन, पलकै गिरें, चित तरपै दिन रात,
उठै सूल उर, प्रीति-पुर अजब अनौखी बात!

उत्प्रेक्षा—

कटि सर ते द्रुत दै गई दृगनि देह-दुति चौंध ,
बरसत बादर-बीच जनु गई बीजुरी कौंध ।

दोहावली मे अलंकार

दुलारे-दोहावली मे वैसे तो अनेक अलकारों का वर्णन है, और ख़ूब है, परतु कविवर दुलारेलाल का पूर्ण कौशल रूपक-अलंकार के उत्कृष्ट वर्णनों में परिलक्षित होता है। स्मरण रहे, उपमा की अपेक्षा रूपक का निर्वाह कठिन होता है। इसमे भी परपरित सावयव सम अभेद रूपक लिखना तो पूर्ण कवित्व-सामर्थ्य की अपेक्षा रखता है। प्रस्तुत दोहावली मे कविवर ने सावयव सम अभेद रूपक-अलकार की पूर्ण छटा अनेक दोहों में, बडे ही कौशल से, छहराई है। किसी विषय को उठाकर, उसके उचित उपकरणो को सजाकर, वैसे ही भाव-साधर्म्य का दूसरा सावयव दृश्य उपस्थित कर उसमे आदि से अंत तक सम अभेद रूपक का निर्वाह कर ले जाना विलक्षण प्रतिभा, प्रबल कल्पना और व्यापक ज्ञान के साथ-साथ सरस अनुभूति का परिचायक है। अब तक रूपको की अनुपम छटा के लिये बिहारी सतसई की ही सर्वापेक्षा अधिक प्रसिद्धि और सम्मान है। पर दुलारे-दोहावली के उत्कृष्ट रूपकों की परपरित सावयव सम अभेद रहने की काव्य-चातुरी देखकर अब विवश होकर यही कहना पडता है कि उत्कृष्ट रूपको की दृष्टि मे दुलारे - दोहावली के दोहे बिहारी - सतसई के दोहों का सफलता से मुक़ाबिला करते है। ऐसे दो-चार रूपक यहाँ देखिए—

हृदय कूप, मन रहँट, सुधि-माल माल, रस राग ,
विरह वृषभ, बरहा नयन क्यों न सिचै तन - बाग ?
नाह - नेह - नभ ते अली, टारि रोस कौ राहु—
पिय-मुख-चद दिखाहु प्रिय, तिय-कुमुदिनि बिकसाहु ।

चित-चकमक पै चोट दे, चितवन-लोह चलाइ—
लगन-लाट हिय-सूत मे ललना गई लगाइ।
रही अछूतोद्धार - नद छुआछूत - तिय छबि,
सास्त्रन कौ तिनको गहति क्रांति-भँवर सो ऊबि।
दपति-हित-डोरी खरी परी चपल चित-डार,
चार चखन-पटरी अरी, झोकनि झूलत मार।

भाषा

दुलारे-दोहावली की भाषा प्रौढ़ साहित्यिक ब्रजभाषा है। स्मरण रहे, प्राचीन काल ही से साहित्यिक ब्रजभाषा मे अत्यत प्रचलित फ़ारसी, बुदेलखडी, अवधी और सस्कृत के तत्सम शब्दो का थोडा-बहुत प्रयोग होता रहा है। ब्रजभाषा के किसी भी कवि की भाषा का बारीकी से अध्ययन करने पर उपर्युक्त बात का पता सहज ही चल सकता है। कुछ प्राचीन कवियों ने तो अनुप्रास और यमक के लिये भाषा को इतना तोडा-मरोडा है कि शब्दों के रूप ही विकृत हो गए है। यद्यपि दोहावलीकार ब्रजभाषा के निर्माता सूर, बिहारी आदि कवीश्वरों द्वारा अपनाए गए बुदेलखडी, अवधी और फ़ारसी के अत्यत प्रचलित शब्दो का बहिष्कार करना अनुचित मानते है, पर उन्होंने प्राय॰ ब्रजभाषा के विशुद्ध रूप को ही अपनी रचना मे अपनाया है। दूसरी प्रांतीय हिंदी-बोलियों अथवा फ़ारसी के शब्दों का आपने इने-गिने दस-पॉच स्थलों पर ही, जहॉ उचित समझा है, प्रयोग किया है। आपने अत्यत प्रचलित अँगरेज़ी-शब्दों का भी दो-चार दोहों में प्रयोग किया है, परंतु ऐसे स्थलों मे प्रयुक्त अँगरेज़ी-शब्द वे है, जिनके पर्यायवाची शब्द हिंदी मे नही मिलते, और जिन्हें आज जनता भली भाँति समझती है। जैसे—

सासन - कृषि तें दूर दीन प्रजा - पछी रहैं,
सासक - कृषकन कूर आर्डिनेंस - चचौ रच्यौ।

इसमें आर्डिनेंस का प्रयोग ऐसा ही हुआ है।

एक और भी उदाहरण दर्शनीय है, जिसमें प्रचलित अँगरेज़ी-शब्दों के प्रयोग द्वारा कविवर श्रीदुलारेलाल ने 'भाषा-समक'-अलंकार रक्खा है—

सत-इसटिक जग-फील्ड लै जीवन-हाकी खेलि,
वा अनत के गोल मे आतम-बालहि मेलि।

दोहावली की भाषा मे बोलचाल की स्वाभाविकता और ज़बाँदानी का चमत्कार सर्वत्र दर्शनीय है। पद-मैत्री का भी सौष्ठव है। अनुप्रास, श्लेष और यमक का बड़ा ही औचित्य पूर्ण, रसानुकूल, सुदर प्रयोग किया गया है। माधुर्य, प्रसाद और ओज की अनेक दोहों में निराली छटा आ गई है। यहाँ स्थानाभाव के कारण भाषा-सौदर्य के विषय मे अधिक न लिखकर मैं दोहावली के शब्दालकारों की छटा की कुछ झलक दिखलाता हूँ—

अनुप्रास—

सतत सहज सुभाव सो सुजन सबै सनमानि—
सुधा-सरस सींचत स्रवन सनी-सनेह सुबानि।
कियौ कोप चित-चोप सो, आई आनन ओप,
भयौ लोप पै मिलत चख, लियौ हियौ हित छोप।
स्याम-सुरँग-रँग-करन-कर रग-रग रँगत उदोत,
जग-मग जगमग जगमगत, डग डगमग नहिं होत।
गुजनिकेतन - गुज - जुत हुतौ कितौ मनरंज!
लुज-पुज सो कुज लखि क्यो न होइ मन रज?
नद-नद सुख-कद कौ मद हँसत मुख-चद,
नसत दद-छलछद-तम, जगत जगत आनंद।

यमक—

बस न हमारौ, बस करहु, बस न लेहु प्रिय लाज ;
बसन देहु, ब्रज मैं हमै बसन देहु ब्रजराज ।
खरी साँकरी हित-गली, बिरह-काँकरी छाइ—
अगम करी ताप अली, लाज करी बिठराइ ।

श्लेष—

मन-कानन मैं बँसि कुटिल, काननचारी नैन—
मारत मति-मृगि मृदुल, पै पोसत मृगपति-मैन ।
सखी, दूरि राखौ सबै दूती - करम - कलाप ,
मन - कानन उपजत - बढ़त प्यार आप-ही-आप ।

दोहावली की भाषा परिमार्जित, व्याकरण-विशुद्ध और शब्दालंकारों से सुसज्जित है । उसमें असमर्थ, विकृत तथा अप्रयुक्त शब्द नहीं है, एवं उसकी सबसे बड़ी विशेषता है समास में कहने की प्रणाली । अत्यंत संक्षेप में विशाल अर्थ भरने में दोहावलीकार ने प्रशंसनीय सफलता प्राप्त की है । इसे देखकर रहीम के इस दोहे का स्मरण हो आता है—

दीरघ दोहा अरथ के, आखर थोरे आहिं ,
ज्यों 'रहीम' नट कुंडली सिमिटि, कूदि कढ़ि जाहिं ।

दोहावली की विशेषता और उसका अंतरंग

दुलारे-दोहावली में हम ब्रजभाषा की कोमल-कांत पदावली में—भावानुगामिनी तथा काव्य गुण-संपन्न भाषा में शृंगार और करुण-रस के कोमलतम मनोभावों की मंजुल, सजीव कल्पना-मूर्तियाँ, वीर-रस की ओजस्विनी युक्तियाँ, देश-प्रेम का छलकता हुआ प्याला, शांत-रस की सुधा-धारा और राष्ट्रीयता एवं नीति की चुटीली, ज़ोरदार सूक्तियाँ पाते हैं । इन सबका वर्णन कवि ने उत्कृष्टतया किया है । यद्यपि दोहावली के दोहों में अनेक विषयों एवं रसों का वर्णन है, पर

प्रधानता शृंगार-रस की है। शृंगार-रस की रचना मे भी संयत प्रकृति के सुकवि ने निर्लज्जता-पूर्ण, उद्वेग-जनक वर्णन को छुआ तक नहीं। दुलारे-दोहावली के शृंगार-वर्णन के दोहे विशुद्ध रति-भाव के द्योतक हैं, जिनमे अनंग काम अशरीरी होकर ही आया है। यथार्थ मे कविवर ने भावधारा-प्रधान साहित्य के मुख्य भाव प्रेम की अभि-व्यंजना और अलौकिक सौदर्य की ही अवतारणा अपने शृंगार-रस के दोहो मे की है। आपने लौकिक अर्थात् नर-नारी-संबंधी और अलौकिक अर्थात् परमात्मा-संबंधी द्विविध शृंगार के संयोग-वियोगात्मक वर्णनो में प्रेम की प्रधानता रखकर अनुभावो का कलामय चमत्कार दिखलाया है। यही एक ऐसे कवि है, जो शृंगार-रस के अनेक सफल चित्र उपस्थित करने मे उद्वेग को सर्वथा बचा गए है। इसके लिये कवि की जितनी प्रशंसा की जाय, थोडी है। आप कुलटा और गणिका तक के भावमय, काल्पनिक शब्द-चित्रो मे उद्वेग का अभाव ही देखेंगे। ऐसे दो उदाहरण यहाँ देखिए—

कुलटा—

लंक लचाइ, नचाइ दृग, पग उँचाइ, भरि चाइ,
सिर धरि गागरि, मगन, मग नागरि नाचति जाइ।

गणिका—

मृदु हँसि, पुनि-पुनि बोलि प्रिय, कै रूखी रुख बाम—
नेह उपै, पालै, हरै, लै बिधि-हरि-हर-काम।

दोहावलीकार ने रस-व्यंजना का वैभव अनुभावो और हावों की सरस योजना मे प्रदर्शित किया है। कुछ उदाहरण लीजिए—

झपटि लरत, गिरि-गिरि परत, पुनि उठि-उठि गिरि जात ;
लगनि-लरनि चख-भट चतुर करत परसपर घात।
ऊँच-जनम जन, जे हरैं नित नमि-नमि पर-पीर,
गिरिवर ते ढरि-ढरि धरनि सींचत ज्यो नद-नीर।

भावो के घात-प्रतिघात का भी कविवर श्रीदुलारेलाल ने अनूठा वर्णन किया है। जैसे—

जीवन - धन - जय - चाह, धन ककन - बधन करति,
उत तन रन - उतसाह, इत बिछुरन की पीर मन।
तिय उलही पिय - आगमन, बिलखी दुलही देखि,
सुखनभ - दुखधर - बीच छुन मन - त्रिसकु - गति लेखि।

सयोग-श्रृगार के वर्णन मे भी कवि ने रति-भाव की सरस अनुभूति की अभिव्यजना को ही प्रधानता दी है। जैसे—

लेत - देत सदेस सब, सुनि न सकत कछु कोय,
बिना तार कौ तार जनु कियौ दृगनु तुम दोय।
नही जु आवन - बात मे, मूँदि लिए दृग लाल
नेह - गही उलही, रही मही - गडी - सी बाल।
दपति - हित - डोरी खरी परी चपल चित - डार,
चार चखन - पटरी अरी, झोकनि झूलत मार।

दुलारे-दोहावली मे प्रधानतया विप्रलभ या वियोग-श्रृंगार का वर्णन पाया जाता है। कविवर ने इसमे भाव-व्यजना या रस-व्यजना के अतिरिक्त वस्तु-व्यजना का भी आश्रय लिया है, परतु इनकी वस्तु-व्यंजना औचित्य की सीमा का उल्लघन करके खिलवाड़ के रूप में कही नही हुई है। इनके भावो मे स्वाभाविक मृदुता और सरसता है। सहृदय भावुक कवि ने अन्यान्य कवीश्वरो के समान विरह के ताप को लेकर खिलवाड़ नहीं किया है, फिर भी इनका विरह-वर्णन बड़ा ही तीव्र और चुटीला है। यहाँ दो-चार उदाहरण देखिए—

कठिन बिरह ऐसी करी, आवति जबै नगीच—
फिरि-फिरि जाति दसा लखे कर दृग मीचति मीच।
नई लगन किय गेह, अली, लली के ललित तन,
सूखत जात अछेह, तरु ज्यो अबरबेलि सो।

तचत विरह-रबि उर - उदधि, उठत सघन दुख-मेह,
नयन-गगन उमडत घुमडि, बरसत सलिल अछेह।
धाय धरति नहि अग जो मुरछा-अली अयान,
उमगि प्रान - पति - सग तो करतो प्रान पयान।
विरह - सिधु उमड्यौ इतौ पिय - पयान - तूफान,
बिथा - बीचि - अवली अली, अथिर प्रान - जलजान।
जोबन - उपबन - खिलि अली, लली - लता मुरझाय!
ज्यो - ज्यो ढ्वे प्रेम - रस, त्यो - त्यो मूखति जाय।
धन - बिछुरन - छन - कन भए मन कौ मन - मन-ढेरि ;
अँसुवन - कन - मनकन रही प्रीति - सुमिरनी फेरि।

कविवर ने भक्ति-शृगार के वर्णन को भी अपनी दोहावली मे, उचित मात्रा मे, अनूठे ढग से, रक्खा है। यहाँ दो-एक उदाहरण द्रष्टव्य हैं—

श्रीराधा - बाधाहरनि - नेहअगाधा - साथ—
निहचल नयन - निकुज मे नचौ निरतर नाथ!
बस न हमारौ, बस करहु, बस न लेहु प्रिय लाज ;
बसन देहु, ब्रज मै हमै बसन देहु ब्रजराज!

श्रीकृष्ण-भक्ति की वैष्णव-सप्रदायो की इस सखी-भक्ति के अतिरिक्त आपने रहस्यवादियो की शृगार-भक्ति के भी दोहे कहे है। कुछ दोहे यहाँ देखिए—

नीच मीच कौ मत कहै, जनि उर करै उदास,
अतरगिनी प्रिय अली पहुँचावति पिय - पास।
समय समुझि सुख - मिलन कौ, लहि मुख - चद - उजास,
मद - मद मदिर चली लाज-मुखी पिय - पास।
उर-धरकनि-धुनि माहि सुनि पिय-पग-प्रतिधुनि कान—
नस-नस ते नैननि उमहि आए उतसुक प्रान।

चहूँ पास हेरत कहा करि-करि जाय प्रयास ?
जिय जाके साँची लगन, पिय वाके ही पास !

शांत-रस और भक्ति की सुधा-धारा भी कविवर ने अपने अनेक दोहों में अत्युत्कृष्टतया प्रवाहित करने में पूर्ण सफलता प्राप्त की है। इस बात के प्रमाण-स्वरूप निम्न-लिखित दो-चार दोहे देखिए—

माया-नींद भुलाइके, जीवन-सपन-सिहाइ,
आतम-बोध बिहाइ तैं मैं-तें ही बरराइ।

जगि-जगि, बुझि-बुझि जगत में जुगुनू की गति होति,
कब अनंत परकास सों जगिहै जीवन-जोति ?

दरसनीय सुनि देस वह, जहँ दुति-ही-दुति होइ,
हौं बौरौ हेरन गयो, बैठ्यौ निज दुति खोइ।

इसी में योग-वर्णन का यह दोहा भी दर्शनीय है—

इडा-गंग, पिंगला-जमुन सुखमन-सरसुति-संग—
मिलत उठति बहु अरथमय, अनुपम सबद-तरंग।

भक्ति-वर्णन के निम्न-लिखित दोहे भी देखिए, कैसे अनूठे हैं—

कब तें, लै मन-ठीकरौ, खरौ भिखारी द्वार !
दरसन-दुति-कन दै हरौ मति-तम-तोम अपार।

अगम सिंधु जिमि सीप-उर मुकता करत निवास,
तिमिर-तोम तिमि हृदय बसि करि हृदयेस ! प्रकास।

ग्राह-गहत गजराज की गरज गहत ब्रजराज—
भजे 'गरीबनिवाज' कौ बिरद बचावन-काज।

नंद-नंद सुख-कंद कौ मंद हँसत मुख-चंद,
नसत दंद-छलछंद-तम, जगत जगत आनंद।

इस कवि ने चेतावनी के भी बड़े ही चुटीले और गंभीर दोहे कहे हैं—

जग-नद मे तेरी परी देह - नाव मँझधार,
मन-मलाह जो बस करै, निहचै उतरै पार।
गई रात, साथी चले, भई दीप - दुति मद,
जोबन-मदिरा पी चुक्यौ, अजहुँ चेति मतिमद!
जोति-उघरनी तें अजहुँ खोलि कपट-पट-द्वारु—
पजर-पिंजर तें प्रभो, पछी - प्रान उबारु।

कविवर दुलारेलाल ने अनेक दोहो मे सजीव प्रतिमाओ की तसवीरे खीच दी है, जैसे—

नई सिकारिन - नारि, चितवन - बसी फेंकिकै,
चट घूँघट पट डारि, चचल चित-झख लै चली।
लक लचाइ, नचाइ दृग, पग उँचाइ, भरि चाइ,
सिर धरि गागरि, मगन, मग नागरि नाचति जाइ।
बार बित्यौ लखि, बार झुकि बार बिरह के बार—
बार-बार सोचति—"कितै कीन्हीं बार लबार?"
जोबन-बन-सुख-लीन मन-मृग दृग-सर बेधि जनु—
धन-ब्याधिनि परबीन बाँधति अलकन-पास मे।

दोहावली मे ऐसे दोहे बहुत है, जिनमे बाते इस प्रकार से कही गई हैं कि जी मे बैठ जाती है। मन कहता है—वाह! ऐसे पाँच दोहे नीचे दिए जाते हैं—

पुर तें पलटे पीय की पर - तिय - प्रीतिहि पेखि—
बिछुरन-दुख सों मिलन-सुख दाहक भयौ बिसेखि।
बिरह - बिजोगिनि कौ करत सपन सजन-सजोग,
है समाधि हू सों सरस नींद, न नींदन - जोग।
हौं सखि, सीसी आतसी, कहति साँच - ही - साँच,
बिरह-आँच खाई इती, तऊ न आई आँच।

सोवत कत इकत, चहुँ चितै रही मुग्ध चाहि,
पै कपोल पै ललक लखि भजी लाज-अवगाहि।
धाय धरति नहि अग जो मुरछा-अली अयान,
उमगि प्रान-पति - सग तो करतो प्रान पयान।

वीर-रस की अभिव्यजना में जो दोहे लिखे गए है, उनमे कवि को अपूर्व सफलता मिली है। यहाँ दो-चार दोहे देखिए—

करी करन अकरन करनि करि रन कवच-प्रदान,
हरन न करि अरि-प्रान निज करनि दिए निज प्रान।
दुष्ट दुसासन दलमल्यौ भीम भीमतम - भेस,
पाल्यौ प्रन, छाक्यौ रकत, बाँधे कृस्ना - केस।
दुष्ट दनुज-दल-दलन को धरे तीक्ष्ण तरवार—
देश-शक्ति दुर्गावती दुर्गा कौ अवतार।
लुट्यो राज, रानी बिकी, सहत डोम-गृह दद,
मृत सुत हू लखि प्रियहि ते कर माँगत हरिचद!

इन दोहो मे ओज और वीर-रस की अभिव्यजना का हृदयहारी कौशल देखते ही बनता है!

नीति-वर्णन की सूक्तियो मे भी दुलारे-दोहावली में अद्भुत चमत्कार आया है। देखिए—

सगत के अनुसार ही सबकौ बनत सुभाइ,
साँभर मे जो कछु परै, निरो नोंन ह्वै जाइ।
होत निरगुनी हू गुनी बसे गुनी के पास,
करत लुएँ खस सलिलमय सीतल, सुखद, सुबास।
नियमित नर निज काज-हित समय नियत करि लेय,
रजनी ही मे गध ज्यो रजनी - गधा देय।
सतत सहज सुभाव सो सुजन सबै सनमानि—
सुधा-सरस सींचत स्रवन सनी-सनेह सुबानि।

सुखद समै सगी सबै, कठिन काल कोउ नाहि ,
मधु सोहैं उपबन सुमन, नहि निदाघ दिखराहि ।
जुद्ध - मद्ध बल सो सबल कला दिखाई देति ,
निरबल मकरिहु जाल बुनि सरप-दरप हरि लेति ।

सौंदर्य-वर्णन मे कवि ने मानुषी रूप और प्रकृति का श्लाघ्य वर्णन किया है । स्मरण रहे, कला मे सौंदर्य प्रधान है । इसी से कवि सौदर्य का वर्णन करता है । बाह्य प्रकृति के सौदर्य का वर्णन संसार के सपूर्ण श्रेष्ठ कवि सदा से करते आए है । कविवर दुलारेलाल के ऐसे वर्णनो में जो श्रेष्ठता है, उसे सौदर्य-प्रेमी पाठक निम्न-लिखित दोहो में पाएँगे । मानुषी रूप का वर्णन देखिए—

बिब बिलोकन कौ कहा झमकि झुकति झर-तीर ?
भोरी, तुव मुख-छबि निरखि होत बिकल, चल नीर !
चख-झख तव दृग-सर-सरस-बूडि, बहुरि उतराय—
बेदी-छटके मे छटकि अटकि जात निरुपाय ।
झीने अबर झलमलति उरजनि-छबि छितराइ ,
रजत-रजनि जुग चंद-दुति अंबर ते छिति छाइ ।
मोह - मूरछा लाइ, करि चितवन - करन - प्रयोग,
छबि-जादूगरनी करति बरबस बस चित-लोग ।
कढि सर ते द्रुत दै गई दृगनि देह-दुति चौंध ,
बरसत बादर - बीच जनु गई बीजुरी कौंध ।
रमनी - रतननि हीर यह, यह साँचो ही सोर
जेती दमकति देह - दुति, तेतौ हियौ कठोर !

प्राकृतिक वर्णनो मे भी विलक्षण सौदर्य के साथ कवि ने काल्पनिक भाव-सौदर्य का अभिन्न मेल मिलाकर हृदयग्राही सौदर्य की सृष्टि की है । स्मरण रहे, जन-साधारण की दृष्टि से कवि की दृष्टि कुछ विलक्षण होती है । शुभ्र-सलिला सरिता जन-साधारण की दृष्टि में

शुभ्र-सलिला सरिता-मात्र है, पर कवि की दृष्टि में उस शुभ्र-वसना सुंदरी का शरीर शृंगार की क्रीडा-भूमि है। निम्न लिखित दोहों से पाठकों को कविवर दुलारेलाल के प्राकृतिक सौंदर्य-वर्णन की महत्ता भली भाँति विदित हो सकेगी। देखिए—

हिममय परवत पर परति दिनकर - प्रभा प्रभात
प्रकृति - परी के उर परयौ हेम - हार लहरात।
नखत-मुकत आँगन-गगन प्रकृति देति बिखराय,
बाल हंस चुपचाप चट चमक - चोंच चुगि जाय।
जनु जु रजनि-बिछुरन रहे पदुमिनि - आनन छाइ,
ओस-आँसु-कन सो करन पोंछत रबि-पिय आइ।
दिन - नायक ज्यों-ज्यों बढ़त कर अनुराग पसारि,
त्यों-त्यों लजि सिमटति, हटति निसि-नवनारि निहारि।
लरिकाई - ऊषा दुरी, झलक्यौ जोबन - प्रात,
छई नई छबि - रबि - प्रभा बाल - प्रकृति के गात।
लखि जग-पथी अति थकित, सझा-बाँह पसारि—
तम - सरायँ मे दै रही छाँह छपा - भटियारि।
जटित सितारन - छद, अबर अगनि झलमलत,
चली जाति गति मद, सजनि-रजनि मुख-चद-दुति।
चचल अचल छलछलति जिमि मुख-छबि अवदात,
सित घन छनि-छनि झलमलति तिमि दिनमनि-दुति प्रात।

हमें आश्चर्य होता है, जब हम देखते हैं कि इतने सकुचित स्थल में कविवर उपर्युक्त विषयो के सिवा देश-प्रेम और राष्ट्रीय भावों के वर्णनो की उपेक्षा न करके उनका उदात्त और समुज्ज्वल वर्णन कर सके हैं।

मातृभूमि-वंदना का निम्न-लिखित दोहा कवि के अगाध देश-प्रेम का साक्षी है—

मम तन तव रज-राज, तव तन मम रज-रज रमत ,
करि बिधि-हरि-हर-काज सतत सृजहु, पालहु, हरहु ।

इसके सिवा राष्ट्रीय भावनाओ से परिपूर्ण निम्न-लिखित गभीर दोहे तो सर्वथा अनूठे ही हैं। देखिए—

झर-सम दीजै देस - हित झर - झर जीवन - दान ,
रुकि-रुकि यो चरसा - सरिस दैबौ कहा सुजान !
गाधी-गुरु ते ग्यॉन लै, चरखा - अनहद - जोर—
भारत सबद - तरग पै बहत मुकति की ओर।
पर-राष्ट्रन-अरि-चोट ते धन - स्वतत्रता - कोट—
तटकर - परकोटा बिकट राखत अगम, अगोट।

कुछ अन्योक्तियॉ भी दर्शनीय है—

सुरस - सुगध - बिकास - बिधि चतुर मधुप मधु-अध !
लीन्हो पदुमिनि - प्रेम परि भलो ग्यॉन कौ धध !!
बसि ऊँचे कुट यो सुमन ! मन इतरैए नाहिं ,
यह बिकास दिन द्वैक कौ, मिलिहै माटी माहि।
बात - भूलि रे फूल यो निज श्री - भूलि न फूलि,
काल कुटिल कौ कर निरखि, मिलन चहत तै धूलि।

राष्ट्र की प्रधान समस्या इस समय अछूतोद्धार और अस्पृश्यता-निवारण है। इसके विषय मे सहृदय कलाकार कवि ने बड़ी ही ज़ोरदार सूक्तियॉ कही है। तीन दोहे यहाँ द्रष्टव्य है—

रही अछूतोद्धार - नद छुआछूत - तिय छबि ,
सास्त्रन कौ तिनकौ गहति क्राति - भॅवर सो ऊबि।
कलिजुग ही मै मै लखी अति अचरजमय बात—
होत पतित - पावन पतित, छुवत पतित जब गात।
छुआछूत - नागिन-डसी परी जु जाति अचेत,
देत मंत्रना - मत्र ते गाधी - गारुडि चेत।

अनेक दोहों में वैज्ञानिक सिद्धांतों का भी बड़ा ही अनूठा समावेश किया गया है। ऐसे दोहे देखिए—

लहि पिय - रबि तें हित-किरन बिकसित रह्यौ अमद ,
आइ बीच अनरस - अवनि किय मलीन मुख-चद ।
हौं सखि, सीसी आतसी, कहति साँच - ही - साँच ,
बिरह - आँच खाई इती, तऊ न आई आँच !
तचत बिरह-रबि उर-उदधि, उठत सघन दुख मेह,
नयन - गगन उमडत घुमडि, बरसत सलिल अछेह ।
नैन-आतसी काँच परि छबि - रबि-कर अवदात—
झुलसायौ उर-कागदहि, उड्यौ साँस - सँग जात ।
साजन सावन - सूर - सम और कछू देखै न ,
तुव दृग-दुति-कर-निकर किय अधबिदुमय नैन ।
एती गरमी देखिकै करि बरसा - अनुमान—
अली भली पिय पै चली लली - दसा धरि ध्यान ।
हृदय - सून तें असत - तम हरौ, करौ जो सून,
सून - भरन के हित झपटि झट आवैगौ सून ।
हीय-दीय-हित-जोति लहि अग जग-बासी स्याम !
दृग - दरपन बिबित करहु निज छबि आठौ जाम ।

भावोत्कृष्टता के विषय में पचासों दोहे हैं। यहाँ केवल कुछ दोहे स्थाली-पुलाक-न्याय से परिचय प्राप्त कराने के हेतु देता हूँ—

खरी दूबरी तिय करी बिरह निठुर, बरजोर,
चितवन चढति पहार जनु जब चितवति मम ओर ।
धाय धरति नहिं अग जो मुरछा-अली अयान,
उमगि प्रान-पति-सग तो करतो प्रान पयान ।
निठुर, नीच, नादान बिरह न छाँड़त संग छिन ,
सहृदय सजनि सुजान मीच, याहि लै जाहु किन ?

साम्यवाद के विषय मे निम्न-लिखित दोहा पढ़कर कवि के व्यापक ज्ञान के साथ-साथ उसकी हार्दिक अनुभूति का भी पता चलता है। देखिए तो, समय की प्रगति की कैसी सुदर, उदार छटा निम्न-लिखित दोहा-रत्न मे झलक रही है—

काम, दाम, आराम कौ सुघर समनुवै होइ,
तौ सुरपुर की कलपना कबहूँ करै न कोइ।

विश्व-प्रेम पर भी आपके दोहे दर्शनीय है—

जाति-पॉति की भीति तौ प्रीति-भवन मे नाहि,
एक एकता - छतहि की छॉह मिलति सब काहि।
ईसाई, हिंदू, जवन, ईसा, राम, रहीम,
बैबिल, बेद, कुरान मे जगमग एक असीम।
एक जोति जग जगमगै जीव-जीव के जीय,
बिजुरी बिजुरीघर - निकसि ज्यो जारति पुर-दीय।

इस तरह आप देखेंगे कि ब्रजभाषा के इस कवि ने नवीन और प्राचीन, सभी विषयो पर सफलता-पूर्वक क़लम चलाई है।

दोहावली का सक्षिप्त परिमाण

उपर्युक्त उद्धरणो मे यह भली भॉति स्पष्ट हो जाता है कि काव्य का यह छोटा-सा, परंतु बहुमूल्य कोष अत्यत गंभीर और श्रेष्ठ वर्णनो का आगार है। इसकी रचना करके श्रीदुलारेलालजी अमर हो गए हैं। जो सज्जन इसके परिमाण की लघुता की ओर देखकर इसे श्रेष्ठ आसन देने मे आनाकानी करें, उन्हे साहित्य-ससार के इस तथ्य का स्मरण रखना चाहिए कि किसी रचना का आदर परिमाण से नही, किंतु काव्योत्कर्ष की दृष्टि से होता है। सस्कृत-साहित्य के विशाल भाडार में एक सौ मुक्तक-रत्नो के कोष अमरुक-शतक का आदर उसकी रचना के काल से आज तक होता आया है। बड़े-बड़े काव्य-मर्मज्ञ, समर्थ समालोचक और साहित्य-गुरु-गंभीर रीति-ग्रथों

के प्रणेता उसे अत्यंत आदर देते आए है। अमरुक-शतक सहस्रो काव्य-प्रबधों मे सर्वोत्कृष्ट माना गया है। इसकी अपूर्वता पर मुग्ध होकर साहित्य-शास्त्र निष्णात परीक्षको ने यह घोषणा की है—

अमरुककवेरेक श्लोकः प्रबन्धशतायते।

ध्वन्यालोक-जैसे श्रेष्ठ रीति-ग्रथ-रत्न के रचयिता उद्भट साहित्याचार्य श्रीआनदवर्द्धन ने ध्वन्यालोक में मुक्तको पर विचार करते हुए अमरुक-शतक के विषय में लिखा है—

मुक्तकेषु हि प्रबन्धेष्विव रसबन्धाभिनिवेशिनः कवयो दृश्यन्ते। यथा ह्यमरुकस्य कवेर्मुक्तकाः शृगाररस्यन्दिनः प्रबन्धायमानाः प्रसिद्धा एव।

अर्थात्, "एक सपूर्ण ग्रथ (प्रबध) मे कवियो को रस-स्थापना का जो पूर्ण प्रबध करना पडता है, वही एक मुक्तक मे भी, जिस प्रकार अमरुक कवि के 'मुक्तक' शृगार-रस का प्रवाह बहाने के कारण ग्रथो (प्रबधो) की समता प्राप्त करने में प्रसिद्ध है।"

जब केवल १०० मुक्तको के कोष अमरुक-शतक को श्रेष्ठता और काव्योत्कर्षता के कारण इतना अधिक सम्मान प्रदान किया जा सकता है, तब कोई कारण नहीं कि दो सौ दोहो की दुलारे-दोहावली को, उत्कृष्ट रचना के कारण, समुचित सम्मान प्रदान न किया जाय। हम जानते है, ससार में ऐसे सज्जनो की सख्या बहुत ही थोडी है, जो दूसरो की उत्तम रचना को यथोचित आदर देने की उदारता से सपन्न होते है। हिदी-साहित्य-सूर्य गोस्वामी तुलसीदासजी ने तो स्पष्ट ही कहा है—

ते नरवर थोरे जग माही,
जे पर-भनित सुनत हरषाही।

फिर यह समय तो छिद्रान्वेषण-प्रधान कहा जा सकता है। इसमें किसी कवि को न्यायोचित सम्मान की आशा करना एक प्रकार से

दुराशा है। कविराज महाराजा भर्तृहरि ने अपने वैराग्य-शतक में ठीक ही कहा है—

बोद्धारो मत्सरग्रस्ता' प्रभव. स्मयदूषिता ,
अबोधोपहताश्चान्ये जीर्णमङ्गे सुभाषितम् । (श्लोक २)

अर्थात्, "जो विद्वान् है, वे मत्सर-ग्रस्त है, जो धनवान् है, वे गर्व से दूषित हृदयवाले है, इनके सिवा जो और लोग है, वे अज्ञानी हैं, इसीलिये सुभाषित (सूक्ति-प्रधान उत्तम काव्य) शरीर में ही जीर्ण-शीर्ण हो जाता है।"

भावापहरण

यहाँ प्रसग वश भावापहरण पर भी विचार करना आवश्यक प्रतीत होता है, क्योकि दुलारे-दोहावली के कुछ दोहे प्राचीन कवीश्वरो के भावो की छाया पर बनाए गए है। स्मरण रहे, अपने पूर्ववर्ती मनुष्यों के प्राप्त किए हुए ज्ञान से परवर्ती लोग लाभ उठाते आए हैं। यह ससार के आदि काल से होता आया है, और अत तक होता जायगा। इसकी गति अबाध है। किसी भी क्षेत्र में यही सिद्धात सर्वत्र दृष्टिगोचर होगा। ससार के प्राय सपूर्ण धर्म और धर्माचार्यों के विषय मे भी यही नियम लागू है। किसी एक धर्माचार्य ने सत्य के जिस सिद्धात को खोज निकाला था, उसी का प्रतिपादन संपूर्ण धर्माचार्य करते आए है। अवश्य भाष्य में परिवर्तन हुए हैं, और यही बादवाले आचार्यों की मौलिकता कही जाती है।

कवि के संबंध में भी यही नियम लागू है। पूर्ववर्ती कवियों के भावो से परवर्ती कवि सदैव लाभ उठाते आए है। पर प्रथम श्रेणी के कलाकार कवि वे है, जो उस पूर्व-प्रसिद्ध भाव में कुछ नूतनता लाए हैं। ऐसे लोग भावापहरण के दोषी नही ठहराए जाते, क्योंकि जिस मैदान मे पूर्ववर्ती ने अत्यत प्रसिद्धि प्राप्त की हो, उसमे खम ठोककर उतरना और ऐसा बल—ऐसा कौशल—दिखलाना, जैसा

वह परम प्रसिद्ध व्यक्ति भी न दिखला सका हो, सचमुच बड़ा ही प्रशसनीय और अभिनदनीय है। ध्वन्यालोककार श्रीआनदवर्द्धनाचार्य ने भावापहरण पर विचार करते हुए लिखा है—

यदपि तदपि रम्य यत्र लोकस्य किञ्चित्
स्फुरितमिति मदीय बुद्धिरभ्युज्जिहीते,
अनुगतमपि पूर्वच्छायया वस्तु तादृक्
सुकविरुपनिबध्नन् निन्द्यता नोपयाति।
(ध्वन्या० ४, १६)

अर्थात्, "जिस कविता मे सहृदय भावुक को कुछ नूतन चमत्कार सूझ पडे, उसमे यदि पूर्ववर्ती कवि की छाया भी झलकती हो, तो उससे कोई हानि नही। इस प्रकार के काव्य का रचयिता कवि अपनी बधच्छाया से पुराने भाव को नवीन स्वरूप देने के कारण निंदा का पात्र नही समझा जा सकता।"

यही पुनः लिख गए है—

दृष्टपूर्वा अपि ह्यर्थाः काव्ये रसपरिग्रहात्,
सर्वे नवा इवाभान्ति मधुमास इव द्रुमा।

अर्थात्, "पेड वही पुराने होते है, पर वसत अपने रस-सचार से उन्हे नवीन रूप प्रदान करके नया बना देता है। इसी प्रकार सुकवि अपनी प्रतिभा से पुराने काव्यार्थ मे नवीन रस का सचार कर उन्हे विकासक वसत के समान शोभामय और रमणीय बना देता है।"

इसी कारण संसार की सपूर्ण भाषाओं के महाकवियो की रचनाओं में पूर्ववर्ती कवियो की छाया पाई जाती है। कवि-कुल-कलाधर कालिदास, शेक्सपियर, तुलसीदास, सूरदास, बिहारी, गालिब और रवींद्रनाथ आदि सपूर्ण कवीश्वरों की रचना में पूर्ववर्ती कवियों के भावों की छाया प्रचुर मात्रा में प्राप्त होती है। कविवर दुलारेलाल की दुलारे-दोहावली भी इस नियम का अपवाद नही। उनके भी कुछ

दोहे पूर्ववर्ती कवियों की रचनाओ के आधार पर लिखे गए है। पर यह बात अवश्य है कि ऐसे स्थलो मे दुलारेलाल अपनी प्रतिभा के बल से नूतन चमत्कार उत्पन्न करके पूर्ववर्ती कवीश्वरो को बहुत पीछे छोड गए है, और इसी कारण वह अर्थापहरण या भावापहरण के दोषी नही ठहराए जा सकते। यह बात मैंने दुलारे-दोहावली की 'पीयूषवर्षिणी' व्याख्या में भली भाँति सिद्ध की है।

हाँ, एक बात यहाँ और कथनीय है। वह यह कि काव्य का आनंद सहृदय ही ले सकते हैं। जो सहृदय नही है, उनका किसी कविता को अच्छा या बुरा कहना उनकी धृष्टता-मात्र है। एक सस्कृत-कवि ने इसके विषय मे यथार्थ ही लिखा है—

यत्सारस्वतवैभव गुरुकृपापीयूषपाकोद्भव
तल्लभ्यं कविनैव नैव हठत पाठप्रतिष्ठाजुषाम्,
कासारे दिवसं वसन्नपि पय' पूर पर पकिल
कुर्वाण कमलाकरस्य लभते कि सौरभ सैरिभ ।

अर्थात्, "गुरु-कृपा-रूप पीयूष-पाक मे उत्पन्न वाणी (सरस्वती) के वैभव को कविजन ही प्राप्त कर सकते है, न कि वे प्रतिष्ठा-लोलुप, जो कविता का पाठ करके हठ-पूर्वक सम्मान चाहते है। सरोवर में सारे दिन पडा रहनेवाला और समग्र जल को कीचडमय कर डालनेवाला भैसा क्या कभी कमलो की सुदर सुगध प्राप्त कर सकता है ?"

व्यंग्य-प्रधान रचना का गूढत्व और टीका

अब इतना निवेदन और करना है कि दुलारे-दोहावली की रचना प्रधानतया व्यंग्य-प्रधान उत्तम काव्य में हुई है, अतएव इसका पूरा आनद मर्मज्ञ विद्वान् ही ले सकते है। व्यग्य-प्रधान काव्य को भली भाँति हृदयगम करने की जिनमे क्षमता नही, जो सहृदय काव्य-मर्मज्ञ नही, उन्हे इसका समझना कठिन होगा। इसी से ऐसे

उच्च कोटि के साहित्य-ग्रथ का सटीक होना आवश्यक है। मैने इस पर टीका और विस्तृत व्याख्या लिखी है, जो प्रकाशित होगी।

दोष-दर्शकों के प्रति

कुछ दोष-दर्शक सज्जन कदाचित् यह कहेगे कि मैने दोहावली का अब तक गुण-गान ही किया है, उसके दोषो की ओर थोडा भी ध्यान नहीं दिया। इसके विषय मे मेरा अपना मत तो यह है कि दुलारे-दोहावली का महत्त्व गुण-बाहुल्य से है, न कि दोष-शून्यता से। फिर दोष-दर्शी आलोचको के मत से तो ससार मे दोष-शून्य काव्य की रचना ही असभव-सी है। वे तो कहते है—

ऐसौ कबित न जगत मे, जामे दूषन नाहि

अतिम निवेदन

मै अतिम निवेदन मे इतना तो अवश्य ही कहूँगा कि ब्रजभाषा में वैज्ञानिक साहित्य-शास्त्र के निर्दिष्ट किए हुए उत्कृष्ट कलात्मक ढंग से ऐसा कुछ लिख लेना, जो सदियो से ससार मे अभूतपूर्व सम्मान प्राप्त किए हुए महान् कवीश्वरो की वाणी के समक्ष ठहर सके, सचमुच में बडी ही जीवट और प्रखर प्रतिभा का काम है, एवं सबल कल्पना-पेक्षित है। इस रचना का स्थान-निर्णय करना भविष्य के हाथो मे है, पर इतना तो निश्चित है कि श्रीदुलारेलालजी की यह कृति ब्रजभाषा-साहित्य की अमर रचना है। मेरी कामना तो यह है कि भार्गवजी ब्रजभाषा के भाडार को शीघ्र ही कोई उत्कृष्ट महाकाव्य देकर हिंदी-साहित्य की गौरव-वृद्धि करे।

आशा है, हिंदी-ससार अपने इस श्रेष्ठ कलाकार का समुचित समादर करेगा।

सागर (मध्यप्रदेश)
२८।७।३४

विनीत
लोकनाथ द्विवेदी सिलाकारी

विज्ञप्ति

[सप्तम सस्करण पर]

सर्व-साधारण को सुलभ करने के लिये ही यह छोटा-सा, पर सुदर संस्करण, सस्ते मूल्य मे, निकाला गया है। अनेक शिक्षा-संस्थाएँ दुलारे-दोहावली को अपने यहाँ कोर्स में रखना चाहती है, पर बृहदाकार सचित्र सस्करण का मूल्य विद्यार्थियो के लिये अधिक—२॥)—होने की उन्होने शिकायत की। आशा है, अब इस संस्करण को अपने पाठ्य-क्रम मे रखने मे उन्हे दिक्कत न होगी। दुलारे-दोहावली का आठवाँ सस्करण मोटे कागज़ पर, रगीन चित्रो से युक्त, छपेगा, और मूल्य भी वही २॥) होगा। आशा है, अपने सुबीते और शक्ति के अनुसार प्रत्येक हिदी-प्रेमी दुलारे-दोहावली का सातवाँ या आठवाँ सस्करण मँगा लेगे।

स्वनामधन्य, पूज्यपाद डॉक्टर गगानाथ झा ने कवि की 'परिणता प्रज्ञा' के उद्‌गारो के सबध मे अपने वक्तव्य में अन्यत्र ध्यान दिलाया है। इसके सबध मे निवेदन है कि इधर ४ वर्ष के अच्छे-अच्छे ४० दोहे छाँटकर दोहावली के इस सस्करण में रक्खे गए है, और पिछले संस्करण से उतने ही दोहे निकाल दिए गए है। कुछ अन्य दोहों का भी संस्कार किया गया है। आकार-वृद्धि की ओर ध्यान न देकर दोहावली को श्रेष्ठतम बनाने का प्रयत्न किया गया है।

विनीत वक्तव्य

[ओरछा मे, वीर-वसतोत्सव के वक्त, दुलारे-दोहावली पर देव-पुरस्कार प्राप्त कर लेने के पश्चात्, पुरस्कार-प्रदाता को, दोहावलीकार द्वारा दिया गया धन्यवाद]

भारतीय भूपालों में सर्वश्रेष्ठ, सहृदय हिंदी-हितैषी, काव्य-कला के कुशल पारखी, भारतीय भाषाओं की महारानी मंजु-मधुर ब्रजबानी के परम प्रेमी, देव-पुरस्कार के प्रसिद्ध प्रदाता श्रीसवाई महेंद्र महाराजा श्रीवीरसिंह देव ओरछाधिपति की सेवा में—

धन्यवाद

मम कृति दोस भरी खरी, निरी निरस जिय जोइ—
है उदारता रावरी, करी पुरसकृत सोइ ।

× × ×

मधु मिलन

सुधा*-जनक जुग मधु-मिलन सुमन-खिलन मधु माहिं,
उर - उपबन मे सुरस-कन सुख - सौरभ सरसाहिं ।

× × ×

ब्रजबानी

बर ब्रजबानी - पदुमिनी प्राचि-ओरछा - ओर—
लखि तमहर प्रिय बीर-रबि खिली पाइ सुख-भोर ।

---

* ओरछाधिपति की ७½ वर्ष की कन्या और उसी उम्र की सुधा-पत्रिका । सुधा-पत्रिका के साथ-साथ जन्म पाने के कारण महाराज ने भी अपनी कन्या-रत्न का नाम सुधा रक्खा है। यह उनके हिंदी-प्रेम का ज्वलत उदाहरण है ।

ब्रजबानी - घन-प्रगति घन देस-गगन बिच छाइ—
दियौ दयालु महेंद्र जू जन - मन - मोर नचाइ ।

× × ×

आलोचकों के प्रति

संतत मद हू ते अधिक पद कौ मद सरसाइ,
वाहि पाइ * बौराइ, पै याहि पाइ † बौराइ ।

तो भी

जे पद-मद की छाकु छकि बोले अटपट बैन,
सोऊ सुजन कृपा करें, भरे नेह सों नैन ।

× × ×

अंतिम प्रार्थना

नेह - नेह दै जो दियौ माहित - दियौ जगाइ,
सतत भन्यौई राखियौ, जगत जोति जगि जाइ ।

श्रीमान् का प्रेम-पूर्वक प्रदत्त यह प्रसिद्ध पुरस्कार प्राप्त करके मैं अपने को गौरवान्वित समझता और इसके लिये श्रीमान् को सादर धन्यवाद देता हूँ। किंतु श्रीमान् को विदित ही है कि मेरा तो सर्वस्व ही सरस्वती माता पर न्यौछावर है। फिर यह सरस्वतीदेवी का प्रसाद तो ख़ास तौर पर उन्हीं को समर्पण होना चाहिए। अतएव मैं आज इस पुरस्कार को भी सहर्ष एक ऐसी शुभ साहित्यिक सेवा में लगाने को उद्यत हूँ, जिसकी आवश्यकता का अनुभव सुदीर्घ समय से सभी सहृदय साहित्यिक सज्जन—कृतविद्य कवि-कोविद कर रहे होंगे। श्रीमान् का दिया हुआ यह धन मैं श्रीमान् के ही नाम से—

---

* पाठांतर सेइ ।

† पाठांतर लेइ ।

वसंत-पचमी * के शुभ दिन को अमर करने के लिये—नवीन और प्राचीन काव्य-पुस्तकों के प्रकाशन मे लगाना चाहता हूँ। पुस्तक-रूप में इतनी ही सपत्ति मैं अपनी ओर से भी इसमे सम्मिलित करके एक पुस्तकमाला 'देव सुकवि-सुधा' नाम से,४,०००) के मूलधन से, प्रकाशित करूँगा। देव पुरस्कार की रकम से जो माला चलाई जाय, उसमें देव-शब्द सयुक्त होना तो ठीक है ही, सुधा-शब्द भी स्पष्ट कारणो से समीचीन है। आशा है, सहृदय साहित्य-ससार को भी यह नाम बहुत सार्थक—समुचित समझ पडेगा। अस्तु। इस पुस्तकावली का प्रबध एक परिषद् द्वारा होगा, जिसमे अनेक सदस्य रहेगे। इनका निर्वाचन बाद मे हो जायगा। मेरी इच्छा है कि श्रीमान् सवाई महेंद्र महाराजा साहब स्वयं इसके सभापति रहें, और मैं मत्री के रूप में सेवा करूँ। आशा है, श्रीमान् मेरी यह साजलि समभ्यर्थना स्वीकार करके मुझे इस सपत्ति को इस शुभ कार्य मे लगाने का आदेश देगे। समिति को या मुझे अधिकार होगा कि किसी सुप्रसिद्ध साहित्यिक सस्था को यह सारी सपत्ति, जब समुचित समझे, समर्पित कर दे।

---

* वसत-पचमी के ही दिन मेरा जन्म हुआ, मेरी प्यारी गगा-पुस्तकमाला का और गगा-फाइनआर्ट-प्रेस का जन्म भी उसी दिन हुआ, तथा वसत-पचमी को ही मै उस स्वर्गीय आत्मा से भी एक किया गया था, जिसके नाम से मै गगा-पुस्तकमाला को गूँथ रहा हूँ।
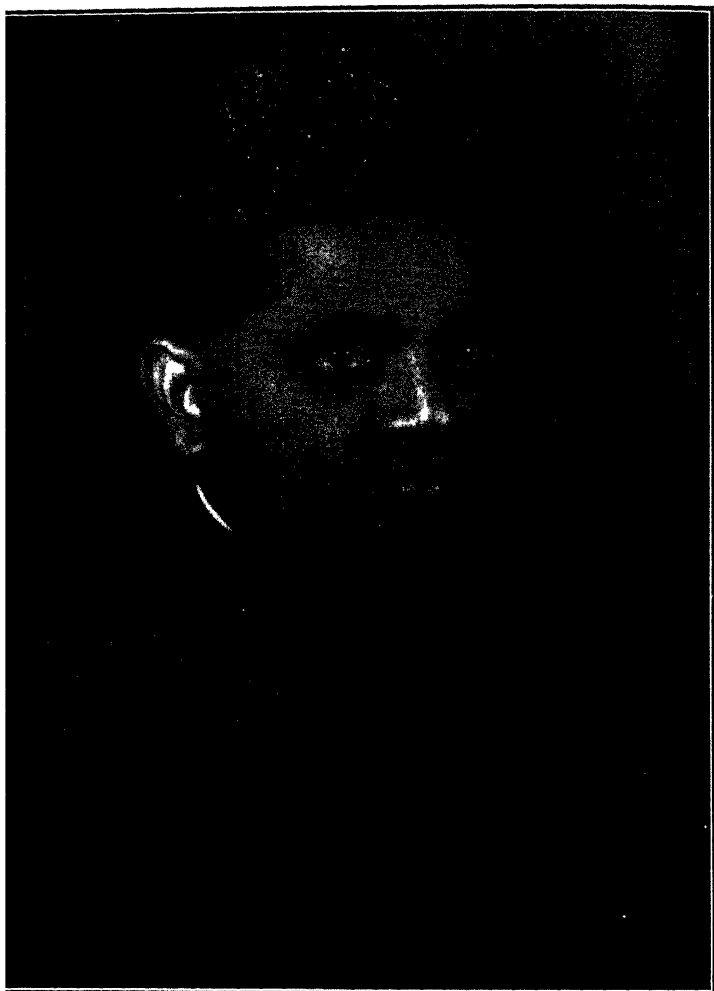
देव-पुरस्कार के सर्वप्रथम विजेता
श्रीदुलारेलाल भार्गव
(सुधा-सपादक)

प्रार्थना

[एक]

सुमिरौ वा बिघनेस कौ
तेज* - सदन मुख - सोम,
जासु रदन-द्युति-किरन इक
हरति बिघन - तम - तोम।

बिघनेस=गणेशजी। **तेज**=(१) प्रभा, (२) ज्ञान। **सोम**=(१) चद्रमा, (२) आकाश। **रदन**=दाँत। **तम-तोम**=अंधकार-राशि।

---

* पाठांतर 'जोति'।

[दो]

बंदि बिनायक बिघन-अरि,

न छुन बिघन समुहाहि,

कर - इंगित के करत ही

छुईमुई ह्वै जाहिं ।

समुहाहि=सामना करे। **कर**=(१) सूँड़, (२) हाथ । **इंगित करत ही**=इशारा करते ही। **छुईमुई**=लाजवती-नाम की बेलि ।

[तीन]

श्रीराधा - बाधाहरनि-

नेहअगाधा - साथ—

निहचल नैन - निकुंज में

नचौ निरंतर नाथ ।

निहचल=(१) अपलक, भावमय। (२) शात, एकांत ।

[चार]

गुंजहार गर, गुंजकर

बंसी कर हरि, लेहु ;

उर - निकुंज गुंजाय, धर-

रोर - पुंज हरि लेहु ।

गुंजहार=गुंजाओं की माला । **गर**=गले मे। **गुंजकर बंसी**=[बाँस की बनी, पर] आनदमयी मधुर ध्वनि करनेवाली मुरली । **धर**=धरा, जगत् । **रोर**=कोलाहल ।

[पाँच]

नयनन रूप ललाम तुव,

बयनन तुव प्रिय नाम,

कानन सुर अभिराम तुव,

प्रानन तू बसु जाम।

बसु जाम=आठो पहर।

[छ]

जनम दियौ, पाल्यौ, तऊ

जन बिसरायौ नाथ।

पर्‌यौ पुहुप मसल्यौ मनौ

मधु ही के मृदु हाथ।

जन=सेवक। पुहुप=फूल। मसल्यौ=मसला हुआ, मीड़ा हुआ। मधु=वसत। मृदु हाथ=मुलायम हाथ से।

[सात]

मम तन तव रज-राज,

तव तन मम रज-रज रमत,

करि बिधि-हरि-हर-काज

सतत सृजहु, पालहु, हरहु।

रज=(१) धूल, (२) रजोगुण, (३) ज्योति, प्रकाश। रमत=(१) अनुरक्त हो रहा है, (२) लीन हो जाता है, व्याप्त हो जाता है, ग़ायब हो जाता है। बिधि=ब्रह्मा। हरि=विष्णु। हर=महेश। सतत=सर्वदा।

[आठ]

नीरस हिय - तमकूप मम ,
दोष - तिमिर बिनसाय—
रस - प्रकास भारति, भरौ,
प्यासौ मन छकि जाय।

तमकूप=अंधा कुआँ । दोष=काव्य-दोष । तिमिर=अंधकार । रस=(१) नवरस, (२) जल । प्रकास=(१) रोशनी, (२) ज्ञान । भारति=भारती, सरस्वती ।

प्रथम शतक

[१]

जोबन - बन - सुख - लीन
मन-मृग दृग-सर बेधि जनु—
धन - ब्याधिनि परबीन
बाँधति अलकन - पास में।

धन = युवती, वधू। पास = जाल।

[२]

कोप-कोकनद-अवलि अलि,
उर - सर लई लगाइ;
पै दिखाइ मुख - चंद पिय
दई ! दई कुम्हिलाइ।

यहाँ कोप से प्रणय-कोप का तात्पर्य है, जो मान-लीला-वश होता है, जैसे—'प्रणय-कोप मालावलि तोरी' (हरिवंश)।

[३]

द्रवि-द्रवि, दै-दै धीर नित

दियौ जु दुरदिन साथ,

ऑस सुमन सो नाथ दै

पहले करौ सनाथ।

द्रवि-द्रवि=पिघल-पिघलकर, दया-द्रवित होकर। **धीर**=धैर्य, धीरज। **दुरदिन**=बुरे दिनो मे, विरह मे। जिन दिनों असमय में, ऋतु के विना, बादल छाए हो, और पानी बरसता हो, उन्हे भी दुर्दिन कहते है। **ऑस**=ऑसू। **सुमन**=(१) फूल, (२) सुदर मन मे, सुख-पूर्वक। **सनाथ**=(१) नाथ-सहित, (२) कृतकृत्य।

[४]

कठिन बिरह ऐसी करी,

आवति जबै नगीच—

फिरि-फिरि जाति दसा लखे

कर दृग* मीचति मीच।

फिरि-फिरि जाति=बार-बार लौट-लौट जाती है। **मीच**=मृत्यु।

* पाठातर 'चख'।

[५]

झपकि रही, धीरें चलौ,

करौ दूरि ते प्यार,

पीर - दब्यौ दरकै न उर

चुबन ही के भार।

पीर=पीड़ा।

[६]

मति - सजनी बरजी किती,
फिरति फिराए नाहि,
नजर-नारि नाचति निलज
ऑग - ऑगनहिं माहि।

मति-सजनी = मति-रूपिणी सखी। **बरजी** = रोकी। **ऑग-ऑगनहिं माहिं** = अग-रूपी ऑगन मे।

[७]

जोबन - देस - प्रबेस करि
बुधजन हू बौरायँ,
चंचल चख चखचख चलति,
चित हित-गुन बँधि जायँ।

बौरायँ = मतवाले हो जाते हैं, विवेक त्याग बैठते है। **चख** = चक्षु, ऑख। **चखचख** = तकरार, कहा-सुनी, झगड़ा। **हित-गुन** = प्रेम-डोर।

[८]

जनु आवत लखि तन-सदन
जोबन - कंत प्रबीन—
स्वागत सिसुता - धन करति
लै कुच - कुभ नबीन।

[९]

दमकति दरपन-दरप दरि
दीपसिखा - दुति देह,
वह दृढ़ इकदिसि दिपत, यह
मृदु दस दिसनि, स-नेह।

दरपन-दरप दरि = दर्पण का दर्प दलन करके। **दीपसिखा-दुति** = दीप-शिखा की प्रभावाली। **स-नेह** = (१) तेल-युक्त, चिकनी, (२) प्रेम-युक्त, प्रेम-भरी, सजीव।

[१०]

नाह - नेह - नभ तें अली,
टारि रोस कौ राहु—
पिय-मुख-चंद दिखाहु प्रिय,
तिय-कुमुदिनि बिकसाहु।

नाह-नेह-नभ ते = प्रेम पात्र के प्रेम-रूपी आकाश से। **रोस** = रिस, क्रोध। **बिकसाहु** = प्रफुल्लित करो।

[११]

कबि - सुरबैद्यन - बीर-रस
साहित - सर सरसाय,
न्हाय जठर भारत-च्यवन
तुरत ज्वान ह्वै जाय।

कबि-सुरबैद्यन = कवि-रूप अश्विनीकुमार। **जठर** = वृद्ध, जरठ। **भारत-च्यवन** = भारत-रूपी च्यवन ऋषि।

[१२]

झर-सम दीजै देस-हित
झर - झर जीवन - दान,
रुकि-रुकि यों चरसा-सरिस
दैबौ कहा सुजान!

झर = पानी का लगातार बरसना, झड़ी या झरना। **जीवन** = (१) जिंदगी, प्राण, (२) जल। **चरसा** = चरस। इस दोहे मे देश-हित मे जिंदगी या प्राण देने का ज़ोरदार भाव है।

[१३]

प्रभा प्रभाकर देत जेहि
साम्राजहि दिन - रात,
ताकों हतप्रभ - सो करत
श्रीगांधी - दृग - पात।

प्रभा = प्रकाश। **प्रभाकर** = सूर्य। **साम्राजहि** = साम्राज्य को।

[१४]

हिममय परबत पर परति
दिनकर - प्रभा प्रभात,
प्रकृति - परी के उर पर्‌यौ
हेम - हार लहरात।

प्रकृति-परी = प्रकृति-रूपिणी अप्सरा। **हेम-हार** = स्वर्णमाल।

[१५]

ऊँच - जनम जन, जे हरै
नित नमि - नमि पर-पीर,
गिरिवर ते ढरि-ढरि धरनि
सीचत ज्यो नद-नीर।

नमि-नमि = झुक-झुककर। धरनि = जमीन पर।

[१६]

संतत सहज सुभाव सों
सुजन सबै सनमानि—
सुधा-सरस सीचत स्रवन
सनो - सनेह सुबानि।

[१७]

भाव-भाप भरि, कलपना-
कर मन-उदधि पसारि—
कबि-रबि मुख-घन ते जगहि
नव रस देय सँवारि।

[१८]

इडा - गंग, पिंगला - जमुन
सुखमन - सरसुति - संग—
मिलत उठति बहु अरथमय,
अनुपम सबद - तरंग।

सुखमन=सुषुम्णा। इस दोहे में इड़ा, पिंगला और सुषुम्णा के मेल का गंगा, यमुना और सरस्वती के संगम से मिलान किया गया है। सबद-तरंग=तरंगों से उठा हुआ शब्द और अनहद-नाद।

[१९]

काँटनि - कँकरिनि बरुनि चुनि,
अँसुवनि - कनि मग सींचि,
कसक - कराहनि हौं रह्यो
आहनि ही तोहिं ईंचि।

[२०]

कब ते, मन - भाजन लएँ,
खरौ तिहारे द्वार!
दरसन - दुति - कन दै हरौ
मति - तम - तोम अपार।

कन=(१) कण, (२) भिक्षा।

[२१]

देह - देस लाग्यौ मदन
इत जोबन - नरनाह,
पगन - चपलई उत लई
जनु दृग - दुरग - पनाह।

देह-देस=शरीर-रूपी देश पर। पगन-चपलई=पैरो की चचलता ने। दुरग=दुर्ग, क़िला। पनाह=शरण।

[२२]

तचत बिरह - रबि उर - उदधि,
उठत सघन दुख - मेह,
नयन - गगन उमडत घुमडि,
बरसत सलिल अछेह।

अछेह=(१) जिसमे छेह अर्थात् छोर और अतर न हो, निरतर। (२) अत्यत, ज्यादा।

[२३]

नेह - नीर भरि-भरि नयन
उर पर ढरि - ढरि जात,
टूटि - टूटि तारक गगन
गिरि पर गिरि - गिरि जात।

तारक=तारे, नक्षत्र।

[२४]

नई सिकारिन - नारि,
चितवन - बंसी फेंकिके,
चट घूँघट - पट डारि,
चंचल चित-झख लै चली ।

बंसी=मछली फँसाने का काँटा । **घूँघट-पट**=घूँघट-पट-रूपी वस्त्र । यहाँ 'पट' श्लिष्ट है । **चित-झख**=चित्त-रूपी मत्स्य ।

[२५]

चीतत चिती जु चीत-पट
चल चख - कूँची फेरि,
चटक मिटाए हू बढ़ति,
कढ़ति न चतुर चितेरि ।

चीतत चिती=चित्र बनाती हुई चित्रित हो गई । **चीत**=(१) चित्त, (२) चित्र ।

[२६]

चित-चकमक पै चोट दै,
चितवन - लोह चलाइ—
लगन-लाइ हिय - सूत मे
ललना गई लगाइ ।

लाइ=अग्नि ।

[२७]

करत रहत संतत नयन
मोतियन कौ ब्यौपार,
फिरि-फिरि तुव सुधि आइ इत
लेति इन्है दै प्यार।

[२८]

मृदु हँसि, पुनि-पुनि बोलि प्रिय,
कै रूखो रुख बाम—
नेह उपै, पालै, हरै,
लै बिधि - हरि - हर - काम।

रूखो रुख=उपेक्षा का भाव। उपै=उत्पन्न करती है।

[२९]

पुर ते पलटे पीय की
पर - तिय - प्रीतिहिं पेखि—
बिछुरन-दुख सों मिलन-सुख
दाहक भयौ बिसेखि।

पुर ते पलटे=नगर से लौटे हुए। पेखि=देखकर। दाहक=जलानेवाला। बिसेखि=विशेष करके।

[३०]

कढ़ि सर तें द्रुत दै गई
दृगनि देह - दुति चौंध,
बरसत बादर - बीच जनु
गई बीजुरी कौंध।

द्रुत = शीघ्र, जल्दी।

[३१]

लखिकें भारत - दीप कों
हतप्रभ - सौ असहाइ,
दै नवजीवन - नेह निज
गंधी दियौ जगाइ।

नवजीवन = (१) नवीन स्फूर्ति, (२) महात्मा गांधी का नवजीवन-नामक पत्र। गंधी = (१) गांधीजी, (२) अत्तार।

[३२]

बीर धीर सहि तीर - झर
कटक काटि कढ़ि* जात,
बादल - दल बरसत बिकट,
बायुयान बढ़ि जात।

* पाठांतर 'चमू चीरि चढ़ि'।

[३३]

रही अछूतोद्धार - नद
छुआछूत - तिय डूबि,
सास्त्रन कौ तिनकौ गहति
क्रांति - भँवर सों ऊबि।

[३४]

नखत - मुकत आँगन-गगन
प्रकृति देति बिखराय,
बाल हंस चुपचाप चट
चमक - चोंच चुगि जाय।

नखत-मुकत = नक्षत्र-रूपी मोती। **बाल हंस** = (१) प्रातःकाल का सूर्य, (२) हंस का बच्चा।

[३५]

सबै सुखन कौ सोत,
सतत निरोग सरीर है,
जगत - जलधि कौ पोत,
परमारथ - पथ - रथ यहै।

सोत = स्रोत, चश्मा। **जलधि** = समुद्र। **पोत** = जहाज।

[३६]

कला वहै, जो आन पै
आपुनि छाँड़ै छाप,
ज्यों गंधी के गेह में
गध मिलति है आप।

आन पै=दूसरे पर। **आपुनि**=अपनी।

[३७]

जाति-पाँति की भीति तौ
प्रीति - भवन में नाहि,
एक एकता - छतहिं की
छाँह मिलति सब काहि।

भीति=भित्ति, दीवार।

[३८]

पुसकर - रज ते मन-मुकुर
पावत इतौ उजास,
होंन लगत बिंबित तुरत
सुचि, अनत परकास।

पुसकर=पुष्कर - तीर्थ, जो अजमेर के पास है। यहाँ ब्रह्मा ने तप किया था। इसका माहात्म्य पद्म-पुराण और नारद-पुराण मे गाया गया है।

[३९]

जग - तरनी में तन - तरी
परी अरी, मँझधार,
मन - मलाह जो बस करै,
निहचै उतरै पार।

निहचै = निश्चय-पूर्वक।

[४०]

माया - नींद भुलाइकै,
जीवन - सपन - सिहाइ,
आतम - बोध बिहाइ तैं
मैं - तैं ही बरराइ।

सिहाइ = मुग्ध होकर। बिहाइ = त्यागकर।

[४१]

मनौ कहे - से देत,
नयन चवाई चपल ह्वै —
तिय - तन - बन - सकेत,
लरिकाईं - जोबन मिले।

चवाई = निंदक। तिय-तन-बन-सकेत = नारी-शरीर-रूपी वन के संकेत-स्थल मे। लरिकाईं-जोबन = बाल्यावस्था और यौवन। इस दोहे मे कवि ने बाल्यावस्था और यौवन को नायिका और नायक कथन कर उनका नारी-तन-रूप वन के सकेत-स्थल में मिलन कराया है, जिसकी चुगली खानेवाले चपल नेत्र हैं।

[४२]

तन - उपबन सहिहै कहा
बिछुरन - झंझावात,
उड्यौ जात उर - तरु जबै
चलिबे ही की बात ?

तन-उपबन = शरीर-रूपी बाग़। **बात** = श्लिष्ट पद है। इससे बात (चर्चा)-रूपी वायु का तात्पर्य है।

[४३]

मुकता सुख - अँसुआ भए,
भयौ ताग उर - प्यार,
बरुनि - सुई ते गूँथि दृग
देत हार उपहार।

ताग = धागा।

[४४]

बीय दीय ज्यों-ज्यो बरे,
त्यों - त्यों घटे सनेह,
हीय - दीय ज्यों-ज्यों जरे,
त्यों - त्यों बढे सनेह।

बीय = दूसरा। **दीय** = दिया। **सनेह** = (१) घृत, (२) प्रेम।

[४८]

लंक लचाइ, नचाइ दृग,
पग उँचाइ, भरि चाइ,
सिर धरि गागरि, मगन, मग
नागरि नाचति जाइ।

भरि चाइ = उमग में भरकर।

[४६]

गंगा - जमुना - सरसुती,
बचपन - जोबन - रूप—
तिय-त्रिबेनि नहिं देति केहिं
मति-महि मुकति अनूप ?

मति-महि = मति-रूपी पृथ्वी से।

[५०]

बही जु आवन-बात में,
मूँदि लिए दृग लाल,
नेह - गही उलही, रही
मही - गड़ी - सी बाल।

आवन-बात = आने की बात-रूपी वायु मे।

[५१]

सिव - गांधी दोई भए
बाँके माँ के लाल,
उन काटे हिंदून - दुख,
इन जग - दृग - तम - जाल।

सिव = शिवाजी। इस दोहे में शिवाजी और गांधीजी की तुलना की गई है।

[५२]

दुष्ट - दनुज - दल - दलन कों
धरे तीक्ष्ण तरवार—
देश - शक्ति दुर्गावती
दुर्गा कौ अवतार।

दुर्गावती=गढामडला की वीर नारी दुर्गावती, जिसने अकबर बादशाह के कड़ामानकपुर के सूबेदार आसफ़ख़ाँ से लोमहर्षण संग्राम किया था।

[५३]

हरिजन तें चाहौ भजन,
तौ हरि - भजन फजूल,
जन द्वारा ही होत नित
राजन - मिलन कबूल।

चाहौ भजन = भागना चाहो।

[५४]

जनु जु रजनि - बिछुरन रहे
पदुमिनि - आनन छाइ,
ओस - आँसु - कन सो करन
पोंछत रवि - पिय आइ।

पदुमिनि-आनन=कमलिनी-रूपिणी पद्मिनी नायिका के मुख पर। **ओस-आँसु**=ओस-रूपी अश्रु। **करन**=किरण-रूपी हाथों से। **रबि-पिय**=सूर्य-रूप पति।

[५५]

नियमित नर निज काज-हित
समय नियत करि लेय,
रजनी ही मे गध ज्यों
रजनी - गंधा देय।

नियमित नर=नियमानुकूल चलनेवाला व्यवस्थित मनुष्य। **रजनी-गंधा**=वह बेलि, जिसके पुष्प रात्रि में ही सुगध बिखेरते हैं।

[५६]

मानस - खस - टाटी सरस
हरि कलि - ग्रीसम - पीर—
त्रयतापन - लूअनि करति
त्रयबिध, सुखद समीर।

मानस=महाकवि तुलसी-कृत रामचरित-मानस। **त्रयतापन**=दैहिक, दैविक एव भौतिक-नामक तीन तापों की। **त्रयबिध-सुखद समीर**=शीतल, मद और सुगध समीर, जो तन, मन, प्राणों को सुखद है।

[५७]

सीत-घाम - लू - दुख सहत,
तऊ न तोरत तार ;
झरत निरंतर झर - सरिस,
सोइ सनेह सुचि, सार।

तऊ=तो भी। झर=झरना। सुचि=पवित्र।

[५८]

उर-धरकनि-धुनि माहि सुनि
पिय-पग-प्रतिधुनि कान—
नस-नस तें नैनन उमहि
आए उतसुक प्रान।

उमहि आए=उमड़कर आए।

[५९]

सत-इसटिक जग-फील्ड लै
जीवन - हाकी खेलि,
वा अनत के गोल में
आतम - बालहि मेलि।

इसटिक=हॉकी खेलने का डंडा। फील्ड=मैदान। गोल=वह स्थान, जहाँ गेंद मेल देने से विजय प्राप्त होती है। बालहिं=गेंद को।

[६०]

ग्राह - गहत गजराज की
गरज गहत ब्रजराज—
भजे 'गरीबनिवाज' कौ
बिरद बचावन - काज।

[६१]

नई लगन किय गेह,
अली, लली के ललित तन,
सूखत जात अछेह,
तरु ज्यों अंबरबेलि सों।

अछेह = लगातार। अंबरबेलि = आकाशवल्ली, अमरबेल।

[६२]

लेत - देत संदेस सब,
सुनि न सकत कछु कोय,
बिना तार कौ तार जनु
कियौ दृगनु तुम दोय।

इस दोहे में नेत्रों द्वारा बेतार का तार बनाया गया है।

[६३]

नयौ नेह दै पिय ! दियौ
जीवन - दियौ जगाइ,
किंचित सिंचित राखियौ,
ह्वै सूनों न बुझाइ ।

नेह = (१) प्रेम, (२) तैल । जीवन-दियौ = जीवन का दीपक ।

[६४]

झपटि लरत, गिरि-गिरि परत,
पुनि उठि-उठि गिरि जात,
लगनि-लरनि चख-भट चतुर
करत परसपर घात ।

लगनि लरनि = प्रेम-युद्ध मे ।

[६५]

अलि, चलि, थकि सुख-रैन में
जब जग सोवत मौन,
मम मन-मंदिर तब, सतत
करत कुलाहल कौन ?

[६६]

चख-झख तव दृग-सर-सरस-

बूड़ि, बहुरि उतराय —

बेदी - छटके मे छटकि

अटकि जात निरुपाय ।

छटका = मछलियो के फँसाने का एक गड्ढा, जो दो जलाशयों के बीच तग मेड पर खोदा जाता है। मछलियाँ एक जलाशय से दूसरे जलाशय मे जाने के लिये कूदती और इसी गड्ढे मे गिर जाती हैं। **छटकि** = छूटकर। **निरुपाय** = लाचार।

[६७]

साजन सावन - सूर - सम

और कछू देखै न,

तुव दृग-दुति-कर-निकर किय

अधबिदुमय नैन ।

साजन = प्यारा, पति। **कर-निकर** = किरणों का समूह। **अंधबिंदु** = आँख के भीतरी पटल पर का वह स्थान, जो प्रकाश को ग्रहण नहीं करता, और जिसके सामने पडी हुई वस्तु दिखलाई नहीं देती।

[६८]

रमनी - रतननि हीर यह,

यह साँचो ही सोर,

जेती दमकति देह - दुति,

तेतौ हियौ कठोर ।

हीर = हीरा।

[६९]

तिय उलही पिय-आगमन,
बिलखी दुलही देखि,
सुखनभ-दुखधर-बीच छन
मन-त्रिसंकु-गति लेखि।

तिय उलही = प्रसन्न हुई। **सुखनभ-दुखधर-बीच** = सुख-रूपी आकाश और दु.ख-रूपी धरती के मध्य की। **मन-त्रिसंकु-गति** = मन की त्रिशकु-जैसी गति। त्रिशकु सूर्यवश के वह पौराणिक नरेश, जिन्हे विश्वामित्र ने सदेह स्वर्ग पहुँचाने का प्रयत्न किया, और इद्र ने पृथ्वी पर पटक दिया। शक्तियो के एक दूसरे के विरुद्ध प्रभाव से बेचारे बीच ही मे लटक गए।

[७०]

चख - तुरग माते इते
छाके छबि की भाँग,
सुमति-छाँद छाँदहुँ, तऊ
छिन - छिन भरत छलाँग।

माते = मदोन्मत्त हो गए। **छाँद** = रस्सी से। **छाँदना** = सटाकर ऐसे पैर बाँधना कि दूर तक न भाग सके।

[७१]

कलिजुग ही मै मै लखी
अति अचरजमय बात—
होत पतित - पावन पतित,
छुवत पतित जब गात।

[७२]

गांधी - गुरु ते ग्यॉन लै,

चरखा - अनहद् - जोर—

भारत सबद - तरंग पै

बहत मुकति की ओर।

भारत=(१) ज्ञान से रत, (२) भारत-देश । **मुकति**= (१) मोक्ष, (२) स्वाधीनता ।

[७३]

जीवन - धन - जय - चाह,

धन ककन - बधन करति,

उत तन रन - उतसाह,

इत बिछुरन की पीर मन।

धन=युवती, पत्नी, वधू।

[७४]

दिन नायक ज्यों-ज्यों बढत

कर अनुराग पसारि,

त्यों-त्यो लजि सिमटति, हटति

निसि - नवनारि निहारि ।

दिन-नायक=सूर्य-रूपी नायक । **बढ़त**=आकाश मे ऊँचे चढता है, आगे बढता है । **कर**=(१) किरण, (२) हाथ । **पसारि**=फैलाकर । **निसि-नवनारि**=रात्रि-रूपिणी नव-बाला ।

[७५]

होत निरगुनी हू गुनी
बसे गुनी के पास ;
करत लुएं खस सलिलमय
सीतल, सुखद, सुबास।

निरगुनी=गुण-हीन।

[७६]

जाति - जोंक भारत - रकत
सतत चूसत जाय,
अंतरजाति - बिबाह कौ
नोंन देहु छिरकाय।

[७७]

सुलभ सनेह न ब्याह सों,
सुलभ नेह सों ब्याह,
ब्याह किए पुनि नेह की
इकै नेह ही राह।

[७८]

अगम सिंधु जिमि सीप-उर
मुकता करत निवास,
तिमिर-तोम तिमि हृदय बसि
करि हृदयेस ! प्रकास।

[७९]

गई रात, साथी चले,
भई दीप - दुति मंद,
जोबन - मदिरा पी चुक्यौ,
अजहुँ चेति मति - मंद !

[८०]

जगि-जगि, बुझि-बुझि जगत में
जुगुनू की गति होति,
कब अनत परकास सौं
जगिहै जीवन - जोति ?

इस दोहे में अनंत ज्योति से संयोग प्राप्त करने को उत्सुक, पुन-पुन जन्म-मरणशील जीवात्मा की वेदना का वर्णन है।

[८१]

नव-तन-देसहि जीति जनु
पट्टु जोबन - नृपराज—
निरमित किय कुच-कोट जुग
आपुनि रच्छा - काज।

[८२]

नैन - आतसी काँच परि
छबि - रबि - कर अवदात—
झुलसायो उर - कागदहि,
उड़यो साँस - सँग जात।

आतसी काँच=आतिशी शीशा। **अवदात**=श्वेत, सुंदर। **साँस**=(१) श्वास, (२) हवा।

[८३]

पलक पोंछि पग-धूरि हौं
डारी दोसन धूरि,
देह धूरि जापै करी,
लग्यौ उड़ावन धूरि।

डारी दोसन धूरि=दोषों को छुपाया—भुलाया। **देह धूरि करी**=शरीर को धूल में मिला दिया।

[८४]

बिब बिलोकन कौ कहा
झमकि झुकति झर-तीर ?
भोरी, तुव मुख-छबि निरखि
होत बिकल, चल नीर !

भोरी=भोली ।

[८५]

मन - मानिक - कन देहु
बिरह - ताप - तापित तुरत,
मुरछित कंचन - देहु
जिला देहु पुनि, पुन लहौ ।

मानिक-कन=जिससे सुनार सोने पर जिला देते हैं । **बिरह-ताप**= वियोगाग्नि । **देहु**=शरीर । **जिला देहु**=(१) जिला दो, आबदार बना दो, (२) सजीव करो । **पुनि**=फिर । **पुन**=पुण्य ।

[८६]

हृदय कूप, मन रहॅट, सुधि-
माल माल, रस राग,
बिरह बृषभ, बरहा नयन,
क्यो न सिंचै तन-बाग ?

सुधि=स्मृति । **माल**=घट-माला । **बरहा**=सिंचाई के लिये बनी हुई नाली ।

[८७

[८७]

नजर - तीर ते नैन - पुर
रच्छित राखन - हेत—
जनु काजर-प्राचीर पिय—
तिय-तन - भू - पति—देत।

काजर-प्राचीर = काजल का परकोटा।

[८८]

उत उगलत ज्वालामुखी
जब दुरबचनन - आग,
उठत हृदय - भू - कंप इत,
ढहत सुदृढ़ गढ़ - राग।

[८९]

बस न हमारौ, बस करहु,
बस न लेहु प्रिय लाज,
बसन देहु, ब्रज मैं हमैं
बसन देहु ब्रजराज!

(देव कवि के कवित्त के आधार पर)

बस न = वश नहीं। बस करहु = (यह लीला) समाप्त करो।
बसन देहु = वस्त्र दे दो। बसन देहु = निवास करने दो।

[६०]

लरिकाई - ऊषा दुरी,
झलक्यौ जोबन - प्रात,
छई नई छबि - रबि - प्रभा
बाल - प्रकृति के गात।

[६१]

भारत - सरहि सरोजिनी
गाधी - पूरब - ओर—
तकि सोचति—'ह्वै है कबै
प्रिय स्वराज - रबि - भोर ?'

सरोजिनी = श्लिष्ट पद है, जिससे भारत की प्रसिद्ध नेत्री श्रीसरोजिनी नायडू और कमलिनी दोनो का अर्थ निकलता है। **पूरब** = पूर्व-दिशा।

[६२]

भारत - भूधर ते ढरति
देस - प्रेम - जल - धार,
आर्डिनेंस - इसपज लै
सोखन चह सरकार* ।

भूधर = पहाड़, पर्वत। **आर्डिनेंस-इसपज** = आर्डिनेंस-रूपी स्पज। स्पज झावे की तरह का एक प्रकार का बहुत मुलायम और रेशेदार पदार्थ होता है, जिसमे बहुत-से छोटे-छोटे छेद होते है। इन्ही छेदो से वह बहुत-सा पानी सोख लेता है, और जब दबाया जाता है, तब उसमे का सारा पानी बाहर निकल जाता है।

* पाठातर 'सोखि रही सरकार।'

[९३]

पर - राष्ट्रन - अरि - चोट ते
धन - स्वतंत्रता - कोट —
तटकर - परकोटा बिकट
राखत अगम, अगोट।

धन-स्वतन्त्रता-कोट=आर्थिक स्वातन्त्र्य-रूपी क़िला। **तटकर-परकोटा**=बाहर से आनेवाले माल (आयात) पर राज्य द्वारा लगाया गया कर-रूप परकोटा। **अगोट राखत**=छिपा रखता है।

[९४]

दिनकर-पुट - बर - बरन लै,
कर - कूँचीन चलाइ,
प्रकृति - चितेरी रचति पटु
नभ-पटु साँझ सुभाइ।

दिनकर-पुट=सूर्य-रूपी गोल पात्र, जिसमें रंग भरा हुआ है। **बर-बरन**=श्रेष्ठ वर्ण या रंग। **कर-कूँचीन**=किरणों की कूँचियों को। **पटु**=प्रवीण। **नभ-पटु**=आकाश के पट पर। **सुभाइ**=(१) स्वभाव से, (२) उत्तम भाव से।

[९५]

सुखद समै सगी सबै,
कठिन काल कोउ नाहि,
मधु सोहै उपबन सुमन,
नहि निदाघ दिखराहि।

मधु=वसंत। **निदाघ**=ग्रीष्म।

[६६]

संगत के अनुसार ही
सबको बनत सुभाइ,
साँभर मे जो कछु परै,
निरो नोंन ह्वै जाइ।

सुभाइ = स्वभाव। **साँभर**=राजपूताने की एक झील, जहाँ से साँभर-नामक नमक निकलता है। **नोन** = लवण, नमक।

[६७]

सतसैया के दोहरा
चुने जौहरी - हीर—
जोति - धरे, तीछन, खरे,
अरथ - भरे गंभीर।

हीर = हीरा। **जोति**=(१) ज्ञान, (२) प्रभा, चमक। **तीछन** (**तीक्ष्ण**)=(१) तेज, बुद्धि-युक्त, प्रतिभा-पूर्ण, (२) तेज नोकवाला। **खरे**=(१) विशुद्ध, (२) चोखे, बढ़िया। **अरथ** (**अर्थ**) = (१) व्यंग्यादि काव्यार्थ, (२) धन। **गभीर**= (१) गहरा, (२) घना, प्रचुर।

[६८]

नीच मीच कौ मत कहै,
जनि उर करै उदास,
अंतरंगिनी प्रिय अली
पहुँचावति पिय - पास।

अतरगिनी प्रिय अली=अंतरग-भेद जाननेवाली प्यारी सखी।

[९९]

जनम-मरन - करियन - जुरी
जीवन - लरी अपार—
नियति-नटी कसि, लसि रही*
रिझै रिझावनहार।

जनम-मरन-करियन-जुरी=जन्म-मरण की कड़ियों से जुड़ी। **जीवन-लरी अपार**= (१) अनंत जीवों की लड़ी, (२) अनंत जीवनों (योनियों) की लड़ी।

* पाठांतर 'प्रकृति-परी पहरति, लसति।'

[१००]

चख-खंजन परि किरकिरी
अंजन डारति धोय,
अखिल निरंजन जो बसै,
क्यों न निरंजन होय ?

चख-खंजन = चपल नेत्र। **अंजन**=काजल। **निरंजन** = (१) अंजन रहित, (२) दोष-रहित, माया-मोह-रहित, (३) स्वयं ईश्वर।

द्वितीय शतक

[१०१]

सुख-सँदेस के ज्वार चढि
 आई सखी सुजान,
लागी आनँद - सिंधु में
 धन बूडन - उतरान ।

[१०२]

उर-पुर अरि - परनारि ते
 रच्छित राखौ लाल !
नतरु बियोग - कृसानु में
 जौहर ह्वैहै बाल ।

अरि-परनारि = शत्रु-रूपिणी अन्य नारी । **कृसानु** = अग्नि । **जौहर ह्वैहै** = चिता प्रज्वलित कर जल मरेगी ।

[१०३]

मन-कानन मे धँसि कुटिल,
कानननचारी नैन—
मारत मति-मृगि मृदुल, पै
पोसत मृगपति - मैन !

मन-कानन = मन-रूपी वन । **कानननचारी नैन** = (१) कानो तक फैले हुए नेत्र, (२) वन मे विचरण करनेवाले अन्यायी (नय+न अर्थात् नय नहीं है जिनमे, ऐसे अन्यायी व्याध) । **मति-मृगि** = मति-रूपिणी मृगी । **मृगपति-मैन** = कामदेव-रूपी सिंह ।

[१०४]

कियौ कोप चित-चोप सों,
आई आनन ओप,
भयौ लोप पै मिलत चख,
लियौ हियौ हित छोप ।

चोप = इच्छा, चाव । **ओप** = आभा । **छोप लियौ** = आच्छादित कर लिया ।

[१०५]

छन-छन छबि की छाक सो
छलिया छैल ! छकाइ—
छँटे-छँटे अब फिरत क्यो
मोह - मूरछा छाइ ?

छाक = नशा । **छँटे-छँटे फिरना** = दूर-दूर रहना । कुछ संबंध या लगाव न रखना ।

[१०६]

दंपति - हित - डोरी खरी
परी चपल चित - डार,
चार चखन - पटरी अरी,
झोंकनि झूलत मार।

मार = काम।

[१०७]

बिरह-बिजोगिनि कौ करत
सपन सजन - संजोग,
सखि, समाधि हू सो सरस
नींद, न नींदन - जोग।

संजोग = मिलन। जोग = योग्य, लायक़।

[१०८]

धन-बिछुरन - छन-कन भए
मन कौ मन - मन - ढेरि,
अँसुवन - कन मनकन रही
प्रीति - सुमिरनी फेरि।

धन = नववधू।

[१०६]

ध्यान धरन दै, धर अधर
धीरै ही अधरानि,
उमड़ि उठै उर-पीर जनि
प्रिय-चुंबन पहचानि।

[११०]

हौं सखि, सीसी आतसी,
कहति साँच-ही-साँच,
बिरह-आँच खाई इती,
तऊ न आई आँच!

[१११]

पुरखन कौ धन दै दियौ
देस-प्रेम की राह,
त्याग-निसेनी चढ़ि चढ़े
चित-चित भामासाह!

[११२]

करी करन अकरन करनि

करि रन कवच - प्रदान,

हरन न करि अरि-प्रान निज

करनि दिए निज प्रान।

करन = दानवीर कर्ण, जिन्होंने अपनी माता कुंती को अपना प्राण-रक्षक कवच प्रदान कर दिया था, और फिर अर्जुन के हाथों मारे गए थे। **करनि** = करनी। **करनि** = हाथों से।

[११३]

ईसाई, हिंदू, जवन,

ईसा, राम, रहीम,

बैबिल, बेद, कुरान में

जगमग एक असीम।

जवन = यवन, मुसलमान। **बैबिल** = बाइबिल। **असीम** = अनंत, परमात्मा।

[११४]

लखि जग-पंथी अति थकित,

संझा - बाँह पसारि—

तम-सरायँ में दै रही

छाँहँ छपा - भटियारि।

पंथी = यात्री। **संझा-बाँह पसारि** = संध्या-रूपिणी बाहें फैलाकर। **तम-सरायँ** = अंधकार-रूपी सराय। **छाँहँ** = आश्रय, छाया। **छपा-भटियारि** = रात्रि-रूपिणी भटियारी।

[११५]

इकै जाति, भाषा इकै,
इकै जु लिपि - बिसतार—
भारत - भू में होय, तौ
टूटैं बंधन - तार।

बिसतार = विस्तार।

[११६]

हिंदी - द्रोही, उचित ही
तुव अँगरेजी - नेह,
दई निरदई पै दई
नाहक हिंदी देह!

हिंदी = हिंदी-भाषा। दई निरदई = निर्दय ब्रह्मा। हिंदी = हिंदुस्थानी।

[११७]

होयँ सयान अयान हू
जुरि गुनवान - समीप,
जगमग एक प्रदीप सों
जगत अनेक प्रदीप।

[११८]

हृदय - सून तें असत - तम
हरौ, करौ जो सून,
सून - भरन - हित तो झपटि
झट आवेगौ सून।

हृदय-सून = हृदयाकाश, घटाकाश। **असत-तम** = असत् माया का अंधकार। **सून** = शून्य, एकात, ख़ाली। **सून-भरन-हित** = रिक्त स्थान (Vaccum) को भरने के लिये। **सून** = शून्य, पूर्ण, परमात्मा।

[११९]

दरसनीय सुनि देस वह,
जहँ दुति - ही - दुति होइ,
हौं बौरौ हेरन गयौ,
बैठ्यौ निज दुति खोइ।

बौरौ = पागल। **हेरन** = (१) खोजने, (२) देखने।

[१२०]

एक जोति जग जगमगै
जीव - जीव के जीय,
बिजुरी बिजुरीघर - निकसि
ज्यों जारति पुर - दीय।

जीय = जी, अतःकरण। **दीय** = दीप, दिए।

[१२१]

बिरह - ताप-तपि भाप-सम
जब उर उड़त अचेत,
तव सुधि - सिंचित आँसु ही
तब सखि, जीवन देत।

[१२२]

रस - रवि - बस दोऊन के
जे हिलि-मिलि खिलि जात,
वेई तुव मुख - चद लखि
चख - जलजात लजात।

रस = प्रेम। चख-जलजात = नेत्र-कमल।

[१२३]

जनु नवबय नृप-मदन-भट
तिय - तन - धर - जय - हेतु—
हनत जु सर, उर - पुर उठत
उरज - समरपन - केतु।

नवबय-नृप-मदन-भट = यौवन-नरेश का कामदेव-रूपी योद्धा। **धर** = धरा, पृथ्वी। **उर-पुर** = वक्षःस्थल-रूपी नगर। **समरपन-केतु** = समर्पण-केतु। वह ध्वजा, जो आक्रमणकारी के भय से साहस-हीन हो आत्मसमर्पण कर देने के उद्देश्य से दिखलाई जाती है।

[१२४]

चीत - चंग चंचल उड़ै
चट चौकस ह्वै जाय ;
ढील दिए जनि सजनि, कहुँ
तरुन - पुंज उरझाय।

तरुन = (१) नवयुवक, (२) पेड़।

[१२५]

एती गरमी देखिकै
करि बरसा - अनुमान—
अली भली पिय पैं चली
लली - दसा धरि ध्यान।

नोट—(१) गरमी हो रही है, अतएव पानी बरसेगा। विरहिणी नायिका को वर्षा अधिक सताएगी। इसलिये नायक को बुलाने चली। (२) नायिका गरम (नाराज़) हो रही है, अब रुदन शुरू होगा। अतएव अपराधी नायक को बुलाने चली।

[१२६]

राखत दूरी दूरि ही
सखि, प्रेमिन कौ प्यार,
नित तिनके मन-कुसुम मे
बसति बसंत - बहार।

[१२७]

फिरि-फिरि उत खिचि जात चख

रूप - रहचटैं * - जोर,

घूमि - घूमि पैरत चपल

ज्यों जल - अलि इक ओर।

रहचटैं=चाह। चसका, लिप्सा। जल-अलि=पानी का भँवरा, जो काले कीड़े के रूप में खटमल-जैसा होता है। यह एक ही ओर घूम-घूमकर तैरता है।

* पाठांतर 'लालसा' अथवा 'राग के'।

[१२८]

तरुन, तरुनई - तरु सरस

काटि न कलुस - कुठार,

सींचि सुजीवन, सुमन धरि,

करि निज सफल बहार।

कलुस=कलुष, पाप-कर्म। सुजीवन=(१) उत्तम जीवन, (२) उत्तम जल। सुमन=(१) अच्छा मन, उत्तम विचारों से पूर्ण, विषय-वासना-रहित मन, (२) पुष्प। सफल=(१) फल-युक्त, (२) सार्थक। बहार=(१) आनंद, उचित संभोग, (२) वसंत।

[१२९]

सखि, जीवन सतरंज-सम,

सावधान ह्वै खेलि,

बस जय लहिबौ ध्यान धरि,

त्यागि सकल रँगरेलि।

[१३०]

जोबन-उपबन-खिलि अली,
लली - लता मुरझाय।
ज्यों - ज्यों डूबे प्रेम - रस,
त्यों - त्यों सूखति जाय।

[१३१]

को तो - सो जग - बीच
दानबीर दारा भयौ ?
नाच रही सिर मीच,
तऊ न छाँड़ी बान निज।

[१३२]

दुष्ट दुसासन दलमल्यौ
भीम भीमतम - भेस,
पाल्यौ प्रन, छाक्यौ रकत,
बाँधे कृस्ना - केस।

दलमल्यौ=मसल डाला, मार डाला। भीम=पांडव भीमसेन, जो महाभारत के युद्ध में पाडव-सेना के सेनापति थे। जब जुए में पाडवों के हार जाने पर दुष्ट दुर्योधन की आज्ञा से कौरव-सभा में दुःशासन ने द्रौपदी के केश पकड़कर खींचे थे, और वस्त्र खींचकर उसे नग्न करना चाहा था, तब महावीर भीम ने दुःशासन का रक्त-पान करने और उसी रक्त से द्रौपदी के बालों को बँधवाने का प्रण किया था। अत में भीम ने अपनी इस प्रतिज्ञा का पालन किया था। **भीमतम**=सबसे अधिक भयानक। **कृस्ना**=द्रौपदी।

[१३३]

सासन-कृषि तें दूर
दीन प्रजा - पंछी रहै,
सासक - कृषकन कूर
आर्डिनेस - चंचौ रच्यौ।

चंचौ=धोखा।

[१३४]

भजत तजत निसि-संग तम,
लखि निसिपति-मुख-चंद,
अंग-नखत लघुदुति दुरत,
सुदुति परत दुतिमंद।

अंग=पक्ष। नखत=नक्षत्र।

[१३५]

पागल कौं सिच्छा कहा,
कायर कौं करवार?
कहा अंध कौं आरसी,
त्यागी कौं घर - बार?

[१३६]

चहत न धन, जस, मान, सुख,
मुकति - ध्यान हू नाहिं ;
उर उमंग जब-जब उठत,
उकति उदित कहि जाहि ।

[१३७]

सहज सनेह, सुभाव मृदु,
सहजोगिता, सुकाम,
एई दंपति - धाम की
दीवारैं अभिराम ।

[१३८]

स्याम-सुरँग-रँग - करन - कर
रग - रग रँगत उदोत,
जग-मग जगमग जगमगत,
डग डगमग नहि होत ।

सुरँग-रँग-करन-कर=प्रेम-रूपी रंग की किरणों के हाथ । **उदोत**= प्रकाश से । **जग-मग**=जग का मार्ग । **जगमग जगमगत**=जगमग-जगमग होता है, प्रकाश झिलमिलाता है । **डग**=पद । **डगमग नहिं होत**=नहीं डिगता, नहीं थरथराता, नहीं फिसलता ।

[१३९]

बंसीधर - अधरन - धरी
बंसी बस कर लेति,
सुधि-बुधि सजनि, भुलाइकें
जोति इकै कर देति।

[१४०]

दुरगम दुरग - प्रबेस मे
मानस मान न हार,
राम - नाम की तोप तें
तोरि लेहु दृढ द्वार।

मानस = मन।

[१४१]

सखी, दूरि राखौ सबै
दूती - करम - कलाप,
मन - कानन उपजत - बढत
प्यार आप - ही - आप।

मन-कानन = मन-रूपी वन। प्यार = (१) प्रेम, (२) एक वृक्ष-विशेष, जिसका बीज चिरौंजी है। मध्यभारत एवं बुंदेलखंड में इस वृक्ष को अचार का वृक्ष भी कहते हैं। यह वृक्ष जंगल में अपने आप पैदा होता है, किसी को इसे रोपना नहीं पड़ता।

[१४२]

खरी साँकरी हित - गली,
बिरह - काँकरी छाइ—
अगम करी तापै अली,
लाज - करी बिठराइ।

लाज-करी = लज्जा-रूपी हाथी।

[१४३]

केहि कारन कसकन लगी
भले मनचले लाल!
आँख - किरकिरी होइ यह,
आँख - पूतरी बाल?

आँख-किरकिरी = आँखों में पड़कर खटकनेवाला तृण-कण, रज-कण आदि। वह, जिसे देखना न चाहें। आँख-पूतरी = प्रिय व्यक्ति।

[१४४]

आवत हित-बित-भीख-हित
पति चख - झोरी डारि,
देहु नयन-कर कोप-कन,
मन - भाजन सुसँभारि।

बित = धन। झोरी डालना = भिक्षा माँगने के लिये झोली उठाना, साधु या भिक्षुक हो जाना।

[१४५]

सोवत कत इकंत, चहुँ
चितै रही मुख चाहि,
पै कपोल पै ललक * लखि
भजी लाज - अवगाहि।

रही मुख चाहि = प्रेम से मुँह ताकती रह गई। **अवगाहि** = नहाकर।
* पाठांतर 'पुलक'।

[१४६]

चख-चर चंचल, चार मिलि,
नवल - बयस - थल आइ—
हित-झँपान लै चित-पथिक
मद - गिरि देत चढाइ।

चर = (१) नौकर, (२) दूत। **नवल-बयस** = नवयौवन।
झँपान = वह सवारी, जिसे चार आदमी कंधे पर लेकर पहाड़ पर चढ़ाते हैं। पहाड़ी स्थानों पर अमीर लोग इस पर चढ़कर जाते हैं।
मद = मदन, कामदेव, नशा, हर्ष।

[१४७]

बार[१] बित्यौ लखि, बार[२] झुकि
बार[३] बिरह के बार[४],
बार-बार[५] सोचति—'कितै
कीन्हीं बार[६] लबार[७]?'

१ दिन, समय। २ द्वार, दरवाज़ा। ३ बाला। ४ भार, बोझा। ५ फिर-फिर। ६ देर। ७ गप्पी, झूठा।

[१४८]

समय समुझि सुख-मिलन कौ,
लहि मुख - चंद - उजास,
मंद - मद मंदिर चली
लाज - मुखी पिय - पास।

उजास=प्रकाश, प्रभा।

[१४९]

गुजनिकेतन - गुञ्ज ते
मंजुल वंजुल - कुंज,
बिहरै कुंजबिहारि तहँ
प्रिय, प्रबीन, रस-पुंज।

गुंजनिकेतन=भौंरा। वंजुल=अशोक का पेड़।

[१५०]

मोह - मूरछा लाइ, करि
चितवन - करन - प्रयोग,
छबि - जादूगरनी करति
बरबस बस चित - लोग।

करन=किरण-रूपी हाथ। लोग=व्यक्ति।

[१५१]

छुट्यो राज, रानी बिकी,
सहत डोम - गृह दंद,
मृत सुत हू लखि प्रियहि तें
कर माँगत हरिचंद !

दंद=दुःख, कष्ट। मृत=मरा हुआ। प्रियहिं तें=प्रिया से भी।

[१५२]

छुआछूत - नागिन - डसी
परी जु जाति अचेत,
देत मत्रना - मंत्र तें
गाँधी - गारुड़ि चेत।

मंत्रना-मंत्र=उपदेश अथवा सम्मति-रूपी मंत्र। गारुड़ि(गारुड़ी)=साँप का विष उतारनेवाला।

[१५३]

कूटनीति - पच्छिम लखत
राष्ट्रसंघ - रबि अस्त—
अस्त्र - सस्त्र - दुति - बृद्धि मे
राष्ट्र - नखत भे व्यस्त।

[१५४]

बात - भूलि रे फूल यों
निज श्री - भूलि न फूलि,
काल कुटिल कौ कर निरखि,
मिलन चहत तैं धूलि।

बात=(१) हवा, वायु, (२) बातें। श्री=(१) शोभा, (२) संपत्ति। न फूलि=गर्व न कर।

[१५५]

होत अथिर रितु-सुमन-सम
सदा बाहरी रूप,
पर उर - अंतर - रूप चिर
सदाबहार अनूप।

[१५६]

डारें हास - फुहार - कन
करन - कियारिन माहिं—
सींचें कबि-माली सुरस,
रसिक - सुमन बिकसाहिं।

करन=कर्ण, कान। सुमन=(१) सुदर मन, (२) पुष्प।

नोट—यह दोहा द्विवेदी-मेला (प्रयाग) में, हास-परिहास-सम्मेलन के सुअवसर पर, वहीं तत्काल लिखा गया था।

[१६०]

तू हेरत इत-उत फिरत,
वह घट रह्यौ समाइ,
आपौ खोवै आपनो,
मिलै आप ही आइ।

घट=हृदय। आपौ=अहत्व, अहंकार। आप ही=स्वय परमात्मा।

[१६१]

संदेसन - पठवन, लिखन,
मिलन कहा मम प्रान,
मन दोउन के इक जबै,
बिछुरन मिलन समान।

[१६२]

धरि हरि-छबि हिय-कोस मे
गोपी, हित - पट गोइ;
बिरहा - डाकू, समय-ठग
तेहि हरि सकै न कोइ।

हिय-कोस=हृदय का खजाना। हरि सकै=हरण कर सके।

[१६३]

जगति जोति ते प्रिय पतँग
जारति जाय लुभाय ?
हँसि न दीपिका, लखि अरी
तुव जीवन हू जाय !

जोति = (१) प्रभा, (२) सुदरता । जाय = वृथा । जीवन = (१) प्राण, जिदगी, (२) घी ।

[१६४]

बिछुरन सुख - खनि साँचई,
मन बिहरै सुखकंद,
छन-भर कौ सुख मिलन मै,
बिछुरन चिर आनंद ।

[१६५]

झीने अंबर झलमलति
उरजनि - छबि छितराइ,
रजत-रजनि जुग चद-दुति
अबर ते छिति छाइ ।

अबर=वस्त्र । रजत-रजनि=चाँदनी रात । अंबर ते=(१) आकाश से निकलकर, (२) बादल से निकलकर ।

[१६६]

जनु जिय जोबन - बटपरा
तिय-तन-रतन लुभाइ—
लियौं चहत, तातैं गयौ
मन - स्वामी अकुलाइ।

[१६७]

सर लगि छत करि, हरि रकत,
हतप्रभ करत सुअग।
चितवन सुख भरि, चपल करि,
चित पर चीतत रंग।

छत = घाव। हतप्रभ = प्रभा-हीन, श्री-विहीन। रग = प्रेम-रग।

[१६८]

धाय धरति नहि अग जो
मुरछा - अली अयान,
उमगि प्रान - पति - सग तो
करतो प्रान पयान।

अयान = अजान। पयान = गमन।

[१६९]

बिरह-उदधि-दुख-बीचि ते
नारी - नाव बचाइ—
लई आइ पिय-ज्वार जनु
अलि, उर - तीर लगाइ।

पिय-ज्वार = प्रिय पति-रूपी ज्वार।

[१७०]

लहि पिय-रबि ते हित-किरन
बिकसित रह्यौ अमंद,
आइ बीच अनरस - अवनि
किय मलीन मुख - चंद।

पिय-रबि = प्रिय पति-रूपी सूर्य। **बिकसित** = खिला। **अनरस-अवनि** = रुष्टता-रूपिणी पृथ्वी।

[१७१]

जुगन - जुगन बिछुरे रहे
हम तें हरिजन लोग,
गाँधी - जोगी - जोग किय
छन मे जुगल - सँजोग।

[१७२]

जुद्ध - मद्ध बल सों सबल
कला दिखाई देति ;
निरबल मकरिहु जाल बुनि
सरप - दरप हरि लेति ।

मकरिहु=मकडी भी । सरप-दरप=सर्प का घमड ।

[१७३]

इक मियान मे रहि सकत
कहुँ जदि जुग तरवार,
तौ भारत हू सहि सकत
जुग-सासन कौ भार!

[१७४]

चंचल अचल छलछलति
जिमि मुख - छबि अवदात,
सित घन छनि-छनि झलमलति
तिमि दिनमनि-दुति प्रात ।

[१७५]

निरबल ह्वै दल बाँधिके
सबलहि देत हराइ,
ज्यों सीगन सों गाय - गन
बन - पति देत भगाइ।

[१७६]

कबि सँग मै राखत हुते
जे नरपाल सुजान,
राखत आज खुसामदी,
मोटर, गनिका, स्वान।

[१७७]

मिलत न भोजन, नगन तन,
मन मलीन, पथ - बासु,
निरधनता साकार लखि
ढारति करुनहु आँसु।

करुनहु = करुणा भी।

[१७८]

निठुर, नीच, नादान
बिरह न छाँडत संग छिन,
सहृदय सजनि सुजान
मीच, याहि लै जाहु किन ?

[१७९]

हीय-दीय-हित-जोति लहि
अग जग-बासी स्याम !
दृग-दरपन बिंबित करहु
बिमल बदन बसु जाम।

हीय-दीय=हृदय-रूपी दिया।

[१८०]

जोति-उघरनी ते अजहुँ
खोलि कपट-पट-द्वारु—
पंजर-पिंजर ते प्रभो,
पंछी-प्रान उबारु।

पंजर-पिंजर=शरीर-रूपी पिंजड़ा।

[१८१]

बिरह-सिंधु उमड़्यौ इतौ
पिय - पयान - तूफान,
बिथा-बीचि-अवली अली,
अथिर प्रान - जलजान।

पिय-पयान - तूफ़ान=प्रिय पति का गमन-रूपी तूफ़ान। **बिथा-बीचि-अवली** = व्यथा की लहरों की कतार में। **प्रान जलजान**= प्राण-रूपी जहाज।

[१८२]

खरी दूबरी तिय करी
बिरह निठुर, बरजोर,
चितवन चढति पहार जनु
जब चितवति मम ओर।

[१८३]

आँसु - माल तुव पहिरिहै
किमि तन बिरहा - ऐन ?
पीर - सिंधु उर उठत लखि
नीर - बिंदु तुव नैन।

[१८४]

राधावर - अधरन - धरी
बाँसुरिया बौराइ—
प्रतिपल पियत पियूख, पै
बिसम बिसहि बरसाइ।

अधरन=ओठ। पियूख=अमृत।

[१८५]

अलि, चंचल चित-फंद मे
अद्भुत बंद लखाइ,
चालक चतुर - चलॉक हू
बाँधन चलि बँधि जाइ।

फद=फदा। चालक=चलानेवाला।

[१८६]

है कलिहारी - तूल,
कलहारी, पिय कल-हरनि,
मुख तौ सुदर फूल,
हिये - मूल बिस - गाँठ पै।

कलिहारी=एक विषैला पौधा, जिसका फूल अत्यत सुदर होता है, और जड मे विषैली गाँठे रहती हैं। तूल=तुल्य, समान। **कलहारी**=कलहकारिणी, कर्कशा।

[१८७]

कहा समुझि इनकौ दियौ
लोयन लोयन - नाम,
लोय-सरिस बालम - बिरह
बरत जु बिना बिराम।

लोयन=लोगों ने। लोयन=(१) लोचन, (२) लोय (लौ) नहीं है जिनमें। लोय=लौ।

[१८८]

सुरस- सुगंध - बिकास-बिधि
चतुर मधुप मधु - अंध।
लीन्हों पदुमिनि-प्रेम परि
भलो ज्ञान कौ धंध॥

[१८९]

जोबन - मकतब तौ अजब
करतब करत लखाय,
पढ़ै प्रेम - पोथी सुमति,
पै मति मारी जाय।

सुमति=अत्यत बुद्धिमान्।

[१६०]

गु जनिकेतन - गु ज - जुत

हुतौ कितौ मनरंज ।

लुज - पुंज सो कुंज लखि

क्यों न होइ मन रंज ?

गु जनिकेतन = भौंरा । **मनरज** = मनोरजन करनेवाला । **लुंज** = ठूँठ ।

[१६१]

देस कला नव बिसतरत,

हरत ताप चहुँ ओर,

करत प्रफुल्ल प्रफुल्लचँद

चतुरन - चित्त - चकोर ।

प्रफुल्लचँद = बगाल के प्रसिद्ध राष्ट्रीय नेता सर प्रफुल्लचद्र राय ।
कला, ताप, प्रफुल्ल, प्रफुल्लचद, ये चारो श्लिष्ट पद हैं ।

[१६२]

दीसत गरभ स्वराज कौ

स्वेत पत्रिका - पेट,

सब गुन-जुत कछु जुगन मे

ह्वैहै भारत - भेट ।

स्वेत पत्रिका = White Paper

[१६३]

काम, दाम, आराम कौ
  सुघर समनुवै होइ,
तौ सुरपुर की कलपना
  कबहूँ करै न कोइ।

समनुवै (समन्वय) = सयोग । कलपना = कल्पना ।

[१६४]

जटित सितारन - छंद,
  अंबर अंगनि झलमलत ,
चली जाति गति मंद,
  सजनि रजनि मुख-चद-दुति।

सितारन = (१) सलमा-सितारा, (२) तारागण । छद = समूह । अबर = (१) वस्त्र, (२) आकाश ।

[१६५]

बसि ऊँचे कुट यो सुमन !
  मन इतरैए नाहि ,
यह बिकास दिन द्वैक कौ,
  मिलिहै माटी माहि।

कुट = (१) वृक्ष, (२) गढ । सुमन = (१) फूल, (२) अच्छे मनवाला। बिकास = (१) प्रस्फुटन, खिलना, (२) उन्नति, वृद्धि । मिट्टी मे मिलना = (१) टूटकर धूल मे गिरना, (२) नष्ट होना ।

[१६६]

कंचन होत खरो - खरो,
लहै आँच कौ संग,
सुजनन पै सतसंग सौं
चढ़त चौगुनौ रंग।

[१६७]

कविता, कंचन, कामिनी
करै कृपा की कोर,
हाथ पसारै कौन फिर
वहि अनंत की ओर ?

[१६८]

फूटि-फूटि बँधि रव करैं
बीचि त्रिबेनी - बीच;
फूटि - फूटि रोवैं मनौ
मुकत निरखि नर नीच।

फूटि-फूटि = पृथक् हो-होकर। रव = आवाज। बीचि = लहर।

[१९९]

चहूँ पास हेरत कहा
करि - करि जाय प्रयास ?
जिय जाके साँची लगन,
पिय वाके ही पास !

जाय = वृथा ।

[२००]

नंद-नंद सुख-कंद को
मंद हँसत मुख - चंद,
नसत दंद - छलछंद - तम,
जगत जगत आनद !

दंद = द्वन्द्व ।

दोहों की अकारादिक्रम-सूची

सम्मतियाँ

१. संस्कृत-संसार के प्रकांड पंडितों की राय

(१) संस्कृत के प्रकांड पंडित, दर्शन-शास्त्र के अद्वितीय विद्वान् डॉक्टर भगवानदास एम्० एल्० ए०—जैसी सुंदर कविता, वैसी ही सुंदर वेश-भूषा अर्थात् पुस्तक की छपाई आदि। मन में निश्चय हुआ कि अपने विषय और प्रकार के किन्हीं दोहों से कम नहीं हैं।

दोहे बहुत अच्छे हैं, बहुत अच्छे हैं। ईश्वर आपकी कविता-शक्ति को अधिकाधिक बल और विकास दे। पर यह भी चाहता हूँ कि और ऊँचे विषय और प्रकार की ओर उस शक्ति को झुका भी दे। चाहे स्वाभाविक अल्परसता के कारण, चाहे वार्धक्य से बुद्धि की स्फूर्ति के ह्रास और नीरसता की वृद्धि के कारण, मेरे मन में फिर-फिर यही बात उठती रहती है कि जैसे तुलसीदासजी ने 'रामायण' लिखकर "प्रज्वालितो ज्ञानमय प्रदीप", जिससे आज तीन सौ वर्ष से करोड़ों भारतवासियों के हृदय के अँधेरे में उजाला होता रहा है, वैसे ही कोई 'भागवत' या 'कृष्णायन' लिखता, जिससे वह उजाला और स्थायी और उज्ज्वल हो जाता, तो बहुत अच्छा होता। कई कवियों से समय-समय पर सूचना भी की, पर अब तक इस ओर किसी ने मन नहीं दिया। आपको बहुत अच्छी शक्ति मिली है, उसका ऊँचा उपयोग कीजिए।

'भागवत' लिखते बन जाय, तो करोड़ों ही पुश्त-दर-पुश्त लाभ

उठावेंगे, सराहेंगे, हृदय से आशीर्वाद देंगे। देखिए, बने, तो संस्कृत-भागवत में नहाइए, उसके रस में भीगिए, उसको आकंठ पीजिए, और फिर जैसे सूर्य समुद्र का पानी सोखकर बरसाता है, वैसे हिंदी-भाषा में उस रस की वर्षा कीजिए।

(२) संस्कृत और अँगरेज़ी के प्रकांड पंडित डॉक्टर गंगानाथ झा, भूतपूर्व वाइस-चांसलर प्रयाग-विश्वविद्यालय—आजकल तो बेचारी ब्रजभाषा ऐसी दुर्दशा में गिरी है कि अभिनव साहित्य-धुरंधरों द्वारा प्रायः उसकी निंदा ही सुनने में आती है। ऐसी दशा में आपने वृद्धा को हस्तावलंब देने का साहस किया, तावन्मात्रेण आपका उद्योग सराहनीय है। उस पर भी जब आपने प्रत्यक्ष दिखा दिया कि ब्रजभाषा की कविता अब भी उत्तम कोटि की—मैं तो यहाँ तक कहूँगा कि सर्वोत्तम कोटि की—हो सकती है, तब तो आप धन्यवाद ही नहीं, पूर्ण आशीर्वाद के पात्र हैं।

(३) संस्कृत के वर्तमान समय में संसार के सबसे बड़े विद्वान्, जयपुर-राजसभा के प्रधान पंडित, महामहोपदेशक, समीक्षाचक्रवर्ती, विद्यावाचस्पति श्रीपंडित मधुसूदन शर्मा ओझा जयपुर-निवासी—यह दोहावली बिहारी-सतसई से स्पर्धा करने-वाली ही नहीं, प्रत्युत कई भावों में उसके टक्कर लगानेवाली पैदा हो गई है। इसमें नयन-वर्णन, सामाजिक विचार और शांत-रस आदि के कई दोहे बिहारी से बढ़कर हैं।

भार्गवजी की रचना के चमत्कार और मौलिकता तो प्रधान गुण हैं। आपकी कोमल-कांत पदावली बड़ी ही श्लाघ्य है। इस कार्य के लिये मैं भार्गवजी को हार्दिक धन्यवाद देकर उन्हें प्रोत्साहित करता हूँ कि वह अपने इस ग्रंथ को आगे और भी बढ़ाकर हिंदी-साहित्य का उपकार करें।

(४) संस्कृत-संसार के सर्वश्रेष्ठ काव्य-मर्मज्ञ, विद्वच्छिरोमणि पूज्यपाद प० बालकृष्णजी मिश्र महाराज, हिंदू-विश्व-विद्यालय में संस्कृत-साहित्य-विभाग के माननीय अध्यक्ष—
कविकुलकुमुदकलाकरेण श्रीदुलारेलालभार्गवेण कृता दोहावलीमाकलयन्न अतितमानन्दमनुविन्दामि । यदस्या रसानुसारिणा छन्दसा रीत्या कोमलतया मासलत्वेन च मनोरमतास्पदानि विद्यन्ते पदानि । अभिधया लक्षणया चाप्रधानवृत्त्या प्रतिपादिता पदार्था प्रायेण विच्छित्ति विशेषाधायि व्यङ्ग्यव्यञ्जकतया पदकदम्बकानीव गुणपदवीं नातिशेरते स यपि समुदये विना प्रयासमायातानां शब्दार्थालङ्कृतीनाम् । रसेषु श्रृङ्गार एव प्राधान्येन ध्वनेर्ध्वनि पथिकतां दधाति । इय किल सहृदय हृदयहारिणी विहारीसतसईप्रभृतिमपि पुरातनीं दोहावली विस्मारयति स्म, तस्मात् स्तोकतोऽपि नास्ति विप्रतिपत्तिरस्या अत्युपादेयतायाम् । किंतु व्यङ्ग्यालङ्कारप्रकाशक विवरणमस्यात्यन्तमावश्यकम्, येनाल्पमतीनामपि मानसे प्रमोद पादमादधीनेति ।

(कवि-कुल-कुमुद-कलाकर श्रीदुलारेलाल भार्गव द्वारा प्रणीत दोहावली को पढ़कर मुझे अतितम (अतुल) आनद हुआ। इसके पद रसानुसारी छद, रीति, कोमलता और पुष्टता से युक्त होने के कारण मनोरमता के सदन हैं । विना प्रयास आए हुए शब्दालकारों और अर्थालकारो के साथ-ही-साथ अभिधा, लक्षणा और व्यजना से प्रतिपादित अर्थ द्वारा वैचित्र्य-विशेष प्रदर्शित करते हुए ये पद गुण-पदवी का भी अनुसरण करते है । रसो मे शृगार ही प्रधानतया ध्वनि के मार्ग का अनुगामी है। सहृदय जनो का हृदय हरण करनेवाली इस 'दोहावली' ने बिहारी-सतसई आदि पुरानी दोहावलियो को भी भुला दिया है, अत इसकी अत्यत उपादेयता रचकमात्र भी अस्वीकार नहीं की जा सकती । किंतु इसके व्यंग्यालंकार का

स्पष्टीकरण अत्यत आवश्यक है, जिससे थोडी बुद्धिवाले भी इसका रसास्वादन कर सकें ।)

नोट—थोडी बुद्धिवालो के लिये भी विस्तृत टीका और व्याख्या-सहित एक सस्करण निकाला जा रहा है। टीका सुप्रसिद्ध काव्य-मर्मज्ञ सिलाकारीजी ने की है ।—प्रबधक गगा-ग्रथागार

२. हिंदी-विद्वानों और काव्य-मर्मज्ञों की राय

(१) महाकवि रत्नाकरजी के 'ऊधव-शतक' और महाकवि हरिऔधजी के 'रस-कलस' के भूमिका-लेखक तथा सर्वप्रधान प्रशंसक, वर्तमान समय मे व्रजभाषा-साहित्य के सर्वश्रेष्ठ आलोचक विद्वद्वर पं० रमाशकरजी शुक्ल 'रसाल' एम्० ए० (हिंदी-अध्यापक, प्रयाग-विश्वविद्यालय) दुलारे-दोहावली को आधुनिक व्रजभाषा-काव्यों से ही नहीं, बिहारी-सतसई तक से ऊँची रचना बतलाते हैं । सम्मति पढ़िए—

यह तो आपको स्मरण ही होगा कि मै आपकी 'दोहावली' को साहित्य-सदन की 'रत्नावली' कह चुका हूँ । दोहे वास्तव मे अपने रग-ढग के अप्रतिम है । ये बडे ही ललित, काव्य कला-कलित एव ध्वनि-व्यंजना-वलित हैं । जैसा अन्य विद्वानो ने इस 'दोहावली' के सबध मे कहा है, वैसा प्रत्येक काव्य-कला-कोशल-प्रेमी सहृदय व्यक्ति कहेगा । इसकी महत्ता-सत्ता दिन-प्रति-दिन बढेगी । सत्काव्य के सभी लक्षण इसमें सुदर रूप मे प्राप्त होते है । यो तो सतसइयाँ कई हैं, किंतु आपकी यह 'दोहावली' अप्रतिम ही है। भाषा-भाव, काव्य-कौशल, सभी दृष्टि से यह सर्वथा सराहनीय है । आप इस अमर रचना से अमर हो गए। व्रजभाषा-काव्य के रसाल-वन मे कल कठ से ककुभ कूजित करनेवाला कोकिल यदि आपको इस रचना के लिये कहा जाय, तो सर्वथा उपयुक्त ही होगा । यदि इस रचना को मुक्तक-

माला की मंजु मणि-मनका कहें, तो अत्युक्ति न होगी। यदि विद्वानों ने इसके दोहों को बिहारी के दोहों के समकक्ष या उनसे भी कुछ उन्नत कहा है, तो ठीक ही कहा है। ब्रजभाषा-काव्य-क्षेत्र में इस समय इस रचना तथा आपको बहुत ऊँचा स्थान प्राप्त हो गया है। ..

आपने ब्रजभाषा-काव्य को इस रचना के रसामृत से सिंचित कर नव-जीवन प्रदान कर दिया है। अब यह कहना, जैसा कुछ लोग कहते हैं, कि अमुक कवि (सत्यनारायण, हरिश्चद्र आदि) ब्रजभाषा का अंतिम कवि था, सर्वथा भ्रम-मूलक और भिन्न-रुचि-मात्र-सूचक ठहरता है। किं बहुना ? निष्कर्ष यह है कि इसमे वाक्य-लाघव, अर्थ-गौरव, माधुर्य एव मंजु मार्दव सर्वत्र चारु चातुर्य-चमत्कार के साथ मिलते हैं। वर्तमान समय मे प्रकाशित काव्यो मे यह सबसे उत्कृष्ट है।

(२) हिंदी-संसार के सर्वश्रेष्ठ समालोचक, विद्वद्वर, कवि-श्रेष्ठ पं० रामचंद्रजी शुक्ल (प्रोफेसर हिंदू-विश्वविद्यालय, बनारस)—केवल सात सौ दोहे रचकर बिहारी ने बडे-बडे कवियों के बीच एक विशेष स्थान प्राप्त किया। इसका कारण है उनकी वह प्रतिभा, जिसके बल से उन्होने एक-एक दोहे के भीतर क्षण-भर में रस से स्निग्ध अथवा वैचित्र्य से चमत्कृत कर देनेवाली सामग्री प्रचुर परिमाण में भर दी है। मुक्तक के क्षेत्र मे इसी प्रकार की प्रतिभा अपेक्षित होती है। राजदरबारो मे मुक्तक काव्य को बहुत प्रोत्साहन मिलता रहा है, क्योंकि किसी समादृत मडली के मनोरंजन के लिये वह बहुत ही उपयुक्त होता है। बिहारी के पीछे कई कवियो ने उनका अनुसरण किया, पर बिहारी अपनी जगह पर अकेले ही बने रहे। हिंदी-काव्य के इस वर्तमान युग में—जिसमे नई-नई भूमियों पर नई-नई पद्धतियों की परीक्षा चल रही है—किसी को यह आशा न थी कि कोई पथिक सामान लादकर बिहारी के उस पुराने रास्ते पर चलेगा।

बिहारी के कुछ दोहो मे उक्ति-वैचित्र्य प्रधान है और कुछ में रस-विधान। ऐसी ही दो श्रेणियों के दोहे इस 'दोहावली' में भी है। रसात्मक दोहो मे बिहारी की-सी मधुर भाव-व्यजना और वैचित्र्य-प्रधान दोहो में उन्ही का-सा चमत्कार-पूर्ण शब्द-कौशल पाया जाता है। जिस ढग की प्रतिभा का फल बिहारी की सतसई है, उसी ढग की प्रतिभा का फल दुलारेलालजी की यह दोहावली है, इसमे सदेह नही। कुछ दोहो मे देश-भक्ति, अछूतोद्धार आदि की भावना का अनूठेपन के साथ समावेश करके कवि ने पुराने साँचे मे नई सामग्री ढालने की अच्छी कला दिखाई है। आधुनिक काव्य-क्षेत्र मे दुलारेलालजी ने व्रजभाषा-काव्य की चमत्कार-पद्धति का मानो पुनरुद्धार किया है। इसके लिये वह समस्त व्रजभाषा-काव्य-प्रेमियो के धन्यवाद के पात्र हैं।

(३) आचार्य-श्रेष्ठ बाबू श्यामसुदरदास के सर्वश्रेष्ठ शिष्य, हिदी के एकमात्र डी० लिट्०, हिदी के उदीयमान लेखक और सुकाव्य-मर्मज्ञ डॉक्टर पीताबरदत्तजी बड़थ्वाल, जिन्होंने प्राचीन हिंदी साहित्य का विशेष रूप से अध्ययन किया है—'दोहावली' पढ़कर यत्परो नास्ति आनद हुआ। आप अपनी रचना को 'नीरस' कैसे कहते है? यदि ऐसी सरस रचना को नीरस कहा जाय, तो सरस रचनाओं की गिनती मे कितनी आ पावेगी? आपकी अनोखी सूझ-बूझ, ललित शब्द-साधना, चमत्कारी सबंध-गुफन, सब सराहनीय हैं। आप सचमुच वाग्देवी के दुलारे लाल है। उसने काव्य-प्रणयन के भृगु-पंथ* को आपके लिये देहली का पैंड़ा बनाकर आपके

---

* भृगु-पथ बदरीनारायण से आगे है, जिस पर चलना असभव ही-सा है। सभवत इस मार्ग से ही भृगु मुनि नारायण के दर्शन के लिये अपने आश्रम से उतरते होगे।

भार्गवत्व की रक्षा की है। मैं राष्ट्रीय विषय ले आने-मात्र के लिये आपकी प्रशंसा नहीं करूँगा, बल्कि इस कारण कि राष्ट्रीय घटनाओं को भी आपने काव्य के साँचे में ढाल दिया है।

इस रूखे ज़माने में भी आपने पुरानी रसिकता के मुग्धकर दर्शन कराए हैं। इसमें संदेह ही नहीं कि आप इस युग के 'बिहारी' हैं; वह समय दूर नहीं जान पड़ता, जब 'बिहारीलाल' कहते ही हठात् दुलारेलाल भी मुँह से निकल पड़ेगा।

(४) काव्य-कल्पद्रुम के यशस्वी लेखक, धुरंधर काव्य-मर्मज्ञ, कविवर श्रीयुत कन्हैयालालजी पोद्दार—जब कि खड़ी बोली के मेघाच्छन्न, अंधकारावृत नभोमंडल में विरल नक्षत्र की भाँति ब्रजभाषा काव्य लुप्तप्राय हो रहा है, ऐसे समय में दुलारे-दोहावली की भाव-पूर्ण, रमणीय, चित्ताकर्षक रचना वस्तुतः चंद्रोदय के समान है।

दुलारे-दोहावली की शैली ब्रजभाषा के प्राचीन दोहा-साहित्य के अनुरूप कोमल-कांत पदावली-युक्त, रस, भाव, ध्वनि, अलंकार आदि सभी काव्योचित पदार्थों से विभूषित है। कुछ दोहे तो बड़े ही चित्ताकर्षक हैं। वे तुलनात्मक आलोचना में महाकवि बिहारीलाल के दोहों की समकक्षता उपलब्ध कर सकते हैं।

निस्संदेह दुलारे-दोहावली अपनी अनेक विशेषताओं के कारण ब्रजभाषा-साहित्य में उच्च स्थान उपलब्ध करने योग्य है।

(५) हिंदी-संसार में व्याकरण के सबसे बड़े पंडित, व्याकरणाचार्य कविवर पं० कामताप्रसादजी गुरु—आपकी रचना प्रशंसनीय है। आपके रचे हुए दोहे पढ़ने से अनेक स्थानों में बिहारीलाल का स्मरण हो आता है..। कुछ दिनों में 'दुलारे-सतसई' तैयार होकर हिंदी-साहित्य का गौरव बढ़ाएगी। आपकी दोहावली व्याकरण की भूलों से सर्वथा मुक्त है।

(६) विद्वद्वर स्वर्गीय रायबहादुर डॉक्टर हीरालालजी डी० लिट्०—इसमे सदेह नही कि आपके दोहे बिहारी के दोहो से स्पर्धा करते है।

(७) हिदी के प्रसिद्ध लेखक श्रीयुत सुधीद्रजी वर्मा एम्० ए०, एल्-एल्० बी०—वास्तव मे बिहारी को मात देकर आपने अपना 'अभिनव-बिहारी' नाम सार्थक किया है। एक-एक दोहा पद-लालित्य, अर्थ-गौरव तथा रचना-सौष्ठव का उत्तम उदाहरण है। प्राचीन कवियो की मौलिक कविता-शैली पर आधुनिक विज्ञान, समाज-शास्त्र, राजनीति, देश-दशा तथा साहित्यिक आदर्श को लेकर आपने वर्तमान हिदी-काव्य का जो पथ-प्रदर्शन किया है, उसके लिये हिदी-साहित्य का आगामी युग आपका अत्यत आभारी होगा। वास्तव में आपका स्थान इस युग मे न केवल सर्वश्रेष्ठ पुस्तक-प्रकाशक, सफल सपादक तथा उत्तम कलाकार की दृष्टि से ही, अपितु एक युग-प्रवर्तक महाकवि की दृष्टि से भी सर्वोपरि रहेगा।

(८) सुप्रसिद्ध काव्य-मर्मज्ञ, 'नवरस' के यशस्वी लेखक, विद्वद्वर श्रीमान् गुलाबरायजी एम्० ए०—इस सागोपाग, सचित्र, कला-कौशल-पूर्ण प्रकाशन के लिये आपको बधाई है। पुस्तक की भूमिका बडी पाडित्य-पूर्ण है। उसमे साहित्य-शास्त्र के प्रधान तत्त्वो तथा ब्रजभाषा के महत्त्व का बडे सुदर रूप से दिग्दर्शन कराया गया है।

भाव-गाभीर्य और अर्थ-व्यजकता के लिये दोहे-जैसे छोटे छद ने जो प्रसिद्धि पाई है, उसे आपने पूर्णतया स्थापित रक्खा है। आपने यद्यपि प्राचीन परपरा का अनुकरण किया है, तथापि उसमे एक सुखद नवीनता उत्पन्न कर दी है। बाजी उपमाएँ कम-से-कम मेरे लिये बहुत नवीन और उपयुक्त प्रतीत होती हैं। आपने जो नई लगन की अमर-बेलि से उपमा दी है, वह बडी सुंदर है। अमरबेलि स्वयं बढ़ती है,

और जिसके आश्रय रहती है, उसे सुखा देती है। यही हाल प्रेम की लगन का है। वह स्वय बढती रहती है, किंतु जिसमे लगन पैदा होती है, वह सूखती या सूखता जाता है। अमरबेलि के जड नहीं होती है, प्रेम की भी कोई जड नही है, तब भी उसकी बेलि हरियाती है। कालो की बुराई तो सूरदासजी ने ख़ूब की है, और उन्होने भ्रमर, कोयल और काक, सबको एक चटसार के बतला दिया है—

सखी री ! स्याम कहा हित जानै
सूरदास सर्बस जो दीजै, कारो कृतहि न मानै।

यद्यपि सूरदासजी के पद का लालित्य तथा उसकी मीठी कसक अनुकरण से परे है, तथापि आपने काले की कृतघ्नता का वैज्ञानिक कारण देकर उसमे एक नवीनता उत्पन्न कर दी है—

लै सबको उर-रग सोखत, लौटावत नहीं,
कपटी, कान्ह, त्रिभंग, कारे तुम ताते भए।

कुछ सीधे-सादे दोहे बहुत सुदर लगते हैं—

पागल कों सिच्छा कहा ? कायर को करवार ?
कहा अध कौ आरसी ? त्यागी कौ घर-बार ?

❀ ❀ ❀

मिलत न भोजन, नगन तन, मन मलीन, पथ-बासु,
निर्धनता साकार लखि ढारत करुना आँसु।

बडा सुदर चित्र है। वर्तमान नृपतियो का भी आपने अच्छा चित्र खींचा है। अछूतोद्धार, गाधी-महिमा आदि सामयिक विषय भी है। मै ईश्वर से प्रार्थना करता हूँ कि आपकी काव्य-प्रतिभा दिन दूनी, रात चौगुनी बढती रहे, और उसके द्वारा व्रजभाषा की बेलि लहलहाती रहे।

(६) सुप्रसिद्ध लेखक और कवि प० लक्ष्मीधरजी वाज-पेयी—आपके दोहो मे काव्य के सर्वोत्कृष्ट गुण मौजूद हैं। मुक्तक

काव्य वर्तमान समय मे बहुत ही कम हिंदी-कवियो ने लिखने का साहस किया है, और जिन लोगो ने लिखा है, उनमे आपकी रचना मुझे तो भाई, बहुत सु दर जँची है। क्योकि अन्य लोगो की रचना मे ऐसे अर्थ-गाभीर्य, भाव-सौंदर्य और काव्यालकार मुझे दिखाई नही दिए।

आपके कई दोहे बिहारी से श्रेष्ठ ज़रूर उतरेंगे। और, बिहारी के दोहो मे जो कही-कही अश्लीलता का दोष लगाया जाता है, सो आपके दोहो मे कहीं नही है। आपकी सुरुचि, प्रतिभा, विदग्धता, रचना-चातुरी और ब्रजभाषा पर आपका इतना अधिकार देखकर कौतूहल होता है।

हि० सा० सम्मेलन के पद्य-सग्रह मे आपकी दोहावली से कुछ दोहे मैं रखवा रहा हूँ।

(१०) पंजाब के प्रसिद्ध विद्वान्, स्त्री-शिक्षा के स्तंभ तथा कन्या-महाविद्यालय के सस्थापक स्वर्गीय लाला देवराज—मै समझता था, अब ब्रजभाषा मे वैसी रस-भरी रचना नही हो सकती, पर आपकी दोहावली को देखकर मै कुछ और ही समझने लगा हूँ। क्या आपके रूप में बिहारी ने अवतार तो नही ले लिया? 'दुलारेलाल' और 'बिहारीलाल' नाम बहुत मिलते है। काम मे भी साद्दश्य है। नामो के अक्षर और मात्राएँ भी समान। आप बिहारी के आधुनिक सस्करण तो नही? दोहे सर्वथा अच्छे है। दोहावली क्या सतसई मे परिणत होगी? हो!

(११) हिंदी की प्रसिद्ध लेखिका श्रीमती अमृतलता स्नातिका, प्रभाकर—मैं 'दुलारे-दोहावली' की कितने दिनो से प्रशसा सुनकर देखने को लालायित हो रही थी। मेरे अहोभाग्य हैं कि मुझे भी इस पुस्तिका का पीयूष पान करने का सुवसर प्राप्त हुआ।

इसके एक-एक पद्य मे अलकारो की झडी तथा व्रजभाषा का सौष्ठव निहारकर श्रीभार्गवजी की अलौकिक कृति पर मन गद्गद हो जाता है। मैं तो समझ रही थी कि कवि बिहारीलाल के साथ ही व्रजभाषा की कविता लुप्त हो गई। पर मेरा मनोभाव ही गलत निकला। दुलारे-दोहावली के ६६, ६७ नबर के दोहे बिहारी से भी भावो मे कही अधिक बढे-चढे है। मैं इस कविता-कानन के मधुकर की काव्य-कुशलता पर उन्हे हार्दिक बधाई देती हूँ।

(१२) पजाब के सर्वश्रेष्ठ लेखक श्रीयुत संतरामजी बी० ए०—मित्र, आपने तो सचमुच कमाल कर दिया। मै नही समझता था, आप ऐसे अच्छे दोहे लिख सकते है। मैं न तो कवि हूँ, और न काव्य मर्मज्ञ, केवल मनोरजन के लिये कभी-कभी कविता का रसास्वादन कर लिया करता हूँ। आपकी दोहावली पढकर मुझे बडा ही आनद आया। कोई-कोई दोहा तो इतना अच्छा है कि पढते ही अनायास 'वाह-वाह' निकल पडती है। पुराने कवियो के दोहो मे जो-जो उत्तम गुण माने जाते है, वे सब आपके दोहो मे मिलते है। अब यह कहना कठिन है कि केवल प्राचीन कवि ही अच्छे दोहे लिख गए है, नवीन कवि वैसे नही लिख सकते। मेरी स्त्री ने भी आपकी दोहावली को बहुत पसद किया है।

(१३) प्रोफेसर दीनदयाल गुप्त एम्० ए०, एल-एल्० बी० (हिंदी-अध्यापक लखनऊ-विश्वविद्यालय)—उक्ति-वैचित्र्य, व्यंग्य और कल्पना की उड़ान मे अनेक दोहे यथार्थ मे बिहारी के दोहो से बहस करते हैं। उनमें यथेष्ट माधुर्य है। उत्प्रेक्षा, रूपक, श्लेष, यमक, अनुप्रास आदि चमत्कार-पूर्ण सूक्तियो की छटा तो समस्त ग्रथ में देखने को मिलती है।......कलात्मकता और दिल को ख़ुश करने की 'ख़्यालबाज़ी' मे दोहावली का कवि कहीं-कही उर्दू के रँगीले शायरो

से भी बाज़ी मार रहा है। रसीले भावों के शब्द-चित्रों को देख तबियत फड़क उठती है, और दिल 'वाह-वाह !' कहकर कवि के मन-उदधि से उठी हुई 'भाव-भाप' में भीग जाता है। इस सराहनीय कृति के लिये श्रीदुलारेलालजी को बधाई है। आशा है, हिंदी-काव्य-मर्मज्ञ 'दोहावली' के भावों को समझकर उसका उचित आदर करेंगे।

(१४) ओयल-नरेश श्रीमान् युवराज दत्तसिंह—श्रीप० दुलारेलालजी की अनुपम तथा सर्वश्रेष्ठ रचना 'दुलारे-दोहावली' को पढ़कर मुझे पहले तो विश्वास नहीं आया कि आधुनिक कवि भी ब्रजभाषा की ऐसी रचनाएँ कर सकते हैं। यह ब्रजभाषा की अत्यंत सुंदर रचना है। इतने मधुर भाव तथा ऐसे अच्छे अनुप्रास तो कदाचित् ही कहीं और मिलें।

(१५) प्रसिद्ध उपन्यास और कहानी-लेखक पं० विश्वंभरनाथ शर्मा 'कौशिक'—बिहारी के पश्चात् ब्रजभाषा में दोहे लिखने का यह आपका प्रयत्न बहुत सफल रहा। वैसे तो सभी दोहों में कुछ-न-कुछ अनोखापन है परंतु कुछ दोहे तो वास्तव में बिहारी से भी बाज़ी मार ले गए हैं।

(१६) प्रोफ़ेसर अयोध्यानाथजी शर्मा एम्० ए० (हिंदी)—आपको इस युग का बिहारी कहना चाहिए। कहीं-कहीं पर तो आपके दोहे बिहारी के कुछ दोहों से भी श्रेष्ठ हो जाते हैं।

(१७) विद्वद्वर प्रोफ़ेसर विद्याभास्करजी शुक्ल एम्० एस्-सी०, साहित्यरत्न, वनस्पति-विज्ञान-अध्यापक, नागपुर-विश्वविद्यालय—दुलारे-दोहावली को आद्योपांत पढ़कर मैं यही कहूँगा कि यह अपने ढंग की एक अनोखी रचना है। दोहों की रोचकता, उनके चुभते हुए भाव और उनका सुंदर शब्द-विन्यास, उनकी पद-योजना तथा उनका प्रवाह देखकर तो कोई भी यह कह

उठेगा कि ये दोहे बिहारीजी के दोहों से कहीं अच्छे हैं, परंतु सबसे अनोखी बात जो मुझे इस रोचक रचना में पसंद आई, वह यह थी कि इसमें कितने दोहे ऐसे हैं, जिनमें उच्च कोटि के विज्ञान की झलक है। ये साइंटिफिक दोहे लेखक की विज्ञान की योग्यता पर झलक डालते हैं। मुझे तो आश्चर्य है कि इतनी थोड़ी अवस्था में ही एक श्रीदुलारेलालजी में कितनी बातें हैं ! उच्च कोटि के संपादक, लेखक, गंगा-पुस्तकमाला-कार्यालय, गंगा-फ़ाइनआर्ट-प्रेस आदि के एकमात्र संचालक होते हुए भी एक धुरधर कवि और उस पर भी विज्ञान की ऐसी योग्यता ! मुझे तो इस रूप में साइंटिफिक रचनाएँ पहली ही बार हिंदी-संसार में दिखाई दी हैं। मैंने आपके कुछ अप्रकाशित दोहे भी सुने हैं, और कितनों में ही विज्ञान के विविध उच्च कोटि के विषयों का सार पाया है।

(१८) हिंदी के सुप्रसिद्ध समालोचक, विद्वद्वर डॉक्टर हेमचंद्र जोशी—आपकी दोहावली चमत्कार-पूर्ण है। इस समय, जब कि हिंदी-साहित्य के ऊपर रहस्य या छायावाद के घनघमंड बादल अपने अनर्थकारी अंधकार की छाया फैलाकर कविता-प्रसाद और रसवती वाक्यावली को लोप करने का सतत प्रयत्न कर रहे हैं, आपकी ब्रजभाषा की ललित, कांत पदावली रस की धार बहाने में समर्थ हुई है। यह देखकर मुझे हर्ष हुआ कि इस विषय पर हिंदी के साहित्यज्ञ एकमत हैं।

(१९) विद्वद्वर प्रोफ़ेसर गोपालस्वरूप भार्गव एम्० एस्-सी०—आपके अनेक दोहे प्राय वे सभी, जिनमें आपने वैज्ञानिक उपमाएँ दी हैं, और कुछ अन्य भी, ऐसे हैं कि बिहारी और मतिराम को मात करते हैं।

होना ही चाहिए था। आपकी ये अमूल्य सेवाएँ भाषा के इतिहास मे स्वर्णाक्षरों मे लिखने योग्य है।

'दुलारे-दोहावली' तैयार करके आपने आदर्श कवित्व-कला-मर्मज्ञता तथा भाव-सरसता का पूर्ण परिचय दिया है।

इस युग में भी ब्रजभाषा की इतनी सुदर और उत्कृष्ट रचना हो सकती है, यह देखकर मुझे परम प्रसन्नता होती है। निश्चय ही आपकी यह रचना ब्रजभाषा-काव्य का गौरव बढ़ानेवाली है। इसमें प्राय सभी रसो का सुदर समावेश किया गया है। लालित्य तथा प्रसाद-गुण प्रत्यक्ष प्रकट होते है। भावो की धारा नैसर्गिक रूप मे प्रवाहित हो रही है। दोहा-सदृश छोटे-से छद मे गभीर भावो का सुरुचि-पूर्ण दिग्दर्शन कराना कवि की प्रतिभा का प्रत्यक्ष प्रमाण है। कल्पनाएँ स्थान-स्थान पर अत्युत्तम तथा मनोमोहक है। इस उत्तम काव्य का अवलोकन करके बिहारी तथा सत्यनारायण की पुनीत स्मृति सहसा उपस्थित हो जाती है। भाषा पर आपका आधिपत्य देखकर परम हर्ष होता है।

३. हिंदी-कवियों की राय

(१) सबसे वृद्ध काव्य-मर्मज्ञ, छद-शास्त्र के अद्वितीय विद्वान्, कविश्रेष्ठ पं० जगन्नाथप्रसादजी 'भानु' लिखते है—

"कवि-सम्राट् श्रीदुलारेलाल भार्गव

सुहृद्वर,

'दुलारे-दोहावली' की प्रति मिली। अनेक धन्यवाद। पुस्तक पढ़कर चित्त अत्यत प्रसन्न हो गया। इसके पहले भी मैं माधुरी या सुधा मे प्रकाशित चित्रो के नीचे छपे आपके बनाए हुए दोहो को पढकर आपकी प्रशसा किया करता था, और मित्रो से कहा करता था कि इन भाव-पूर्ण दोहो को पढ़कर बिहारी कवि का स्मरण हो

आता है। सचमुच मे जैसे वह कोमल पर मार्मिक, ललित पर अनूठे, सरस और सजीव दोहों के लिखने मे समर्थ और सिद्ध-हस्त थे, जान पडता है, वे ही सब बाते माता सरस्वती ने आपकी लेखनी मे भी भर दी है। ब्रजभाषा के वर्तमान काल के कवियो मे . सर्वश्रेष्ठ कवि मानता हूँ।

आपने यह बहुत अच्छा किया, जो इन सब दोहो को क्रमबद्ध करके उनका सग्रह, सचित्र और सजावट के साथ, प्रकाशित कर डाला। यह अब हिंदी-साहित्य की बहुमूल्य चीज हो गया है।"

(२) महाकवि शंकरजी—महाकवि पं० नाथूरामशंकरजी शर्मा ने, सन् १६२२ मे, माधुरी मे प्रकाशित दुलारे-दोहावली के प्रारंभिक और अपेक्षाकृत साधारण दोहो पर ही मुग्ध होकर बिना जाने ही कि ये श्रीदुलारेलाल के लिखे है, उन्हे लिखा था—"माधुरी बडे ठाट-बाट से निकली है। परमात्मा उसे उत्तरोत्तर उन्नति के उच्च शिखर पर चढ़ावे। दोहा लाजवाब निकला है। दोहा के प्रणेता की सेवा में मेरा प्रणाम पहुँचे। कविता है, तो यह है!"

नोट—सुप्रसिद्ध काव्य-मर्मज्ञ, सपादक-प्रवर, कविवर प० हरिशकर शर्मा का कथन यह है कि पूज्य पिताजी शकरजी महाराज दुलारे-दोहावली के दोहों की सदा प्रशसा करते रहते थे, और 'माधुरी' मे प्रकाशित कुछ दोहो पर उन्होने "बहुत खूब" लिख रक्खा था।

(३) महाकवि श्रीमैथिलीशरणजी गुप्त—आज लोग भले ही उन पर टीका-टिप्पणी करे, परतु हिंदी-काव्य के दोहा-साहित्य के इतिहास मे प्राचीनों के साथ उनका भी एक विशेष स्थान होगा ही। एक मित्र के नाते उसके लिये मैं उन्हे सहर्ष बधाई देता हूँ।

(४) महाकवि श्रीसियारामशरणजी गुप्त—मुझे तो आपके

दोहे बहुत पसंद हैं। आपने ब्रजभाषा की महादेवी के कंठ में दोहा-वली का जो यह आभूषण पहनाया है, उसका सोना तो प्राचीन है, अतएव उसे खरा मानना ही पड़ेगा, किंतु उसमें निर्माण-रुचि की नवीनता भी यथेष्ट परिमाण में है। इस संबंध में आपको अपूर्व सफलता मिली है।

(५) छायावाद के श्रेष्ठ महाकवि पं० सुमित्रानंदनजी पंत—प्राय प्रत्येक दोहा आपने मौलिक प्रतिभा, कोमल पद-विन्यास एवं काव्योचित भाव-विलास से सजाया है। शृंगार तथा प्रकृति-प्रधान दोहे मुझे अधिक पसंद हैं। तुलनात्मक दृष्टि से मध्यकालीन महारथियों की रचनाओं से वे होड़ लगाते हैं।

(६) हिंदी-साहित्य के सर्वश्रेष्ठ इतिहासकार, सुप्रसिद्ध समालोचक, विद्वद्वर रायबहादुर प० शुकदेवबिहारी मिश्र बी० ए०—प० सुमित्रानंदनजी पंत ने दुलारे-दोहावली के संबंध में जो कुछ लिखा है, उसमें मैं अक्षरश सहमत हूँ।

(७) कवि-सम्राट् पं० अयोध्यासिंहजी उपाध्याय 'हरिऔध'—

काके दृग बिलसे नहीं लहे सु मुकुता-हार,
देखि दुलारेलाल - कृत दोहावली - दुलार ?
बनी सरस दोहावली, बरसि सुधा-रस-धार,
कौन दुलारेलाल के दिल कौ लहै दुलार ?

(८) कविवर प्रोफेसर रामदास गौड़ एम्० ए०—२०० दोहों तक आँखें पहुँच गईं। बढ़े चलिए। ७०० पूरे कीजिए। बड़े बाँके दोहे हैं। राजनीतिक दोहे महत्त्व के हैं। रचनाकाल के अंत साक्षी भी हैं। मुझे तो आपके कई अनुपम दोहे बिहारी से भी चोखे लगते हैं। आजकल के विषयों का समावेश करके आपने इन्हें समयानुकूल बना दिया है। रत्नाकरजी ऐसा नहीं कर सके।

(९) सरस्वती-संपादक विद्वद्वर पं० देवीदत्तजी शुक्ल—मैं ब्रजभाषा नहीं जानता, तो भी इसे पढ़ गया। कई दोहे बहुत सुंदर जान पड़े। १५, २७, २८, ३३, ३९, ५२, ६१, ६२, ७६, ७७, ८३ नंबर के दोहे मुझे अधिक पसंद आए। यदि आपके दोहे खड़ी बोली में होते, तो उनसे राष्ट्र-भाषा का निस्संदेह गौरव बढ़ता, तथापि सफल कविता-रचना के लिये आपको बधाई है।

(१०) सरस्वती-संपादक कविवर ठाकुर श्रीनाथसिंहजी—आपका 'स्मर-बाग' दोहा बिहारी के दोहों से बाज़ी मार ले गया है! थोड़े शब्दों में बड़ी बात व्यक्त करने के लिये बिहारी प्रसिद्ध हैं। पर, जान पड़ता है, आप उनकी इस प्रसिद्धि पर चोट करेंगे।. मैं दोहों का विरोधी था , पर आपके दोहों ने इस दिशा में भी मेरी रुचि उत्पन्न कर दी है। मैं सप्रमाण सिद्ध कर सकता हूँ कि आपकी दोहावली बिहारी-सतसई से बाज़ी मार ले गई है।

(११) कविश्रेष्ठ हितैषीजी—आपने दोहे लिखकर वह कमाल दिखलाया कि मैं आश्चर्य-चकित रह गया। मैं स्पष्ट कहने में संकोच न करूँगा कि आपने बिहारी से लेकर अब तक के प्राय सभी कवियों को पीछे छोड़ दिया। आचार्य द्विवेदीजी के सम्मान के हेतु हुए प्रयाग के द्विवेदी-मेला में राजा साहब कालाकाँकर के और मेरे अनुरोध पर तुरत रचना करके तो आपने मुझे मुग्ध ही कर लिया था। तब मैंने ही नहीं, वरन् उपस्थित सहस्रों नर-नारियों ने मुक्त कंठ से आपकी अपूर्व कवित्व-शक्ति की प्रशंसा की थी। आपकी यह दोहावली वर्तमान काल में ब्रजभाषा की अद्वितीय वस्तु है।

(१२) आचार्य रामकुमार वर्मा एम्० ए०, हिंदी-विभाग, इलाहाबाद-युनिवर्सिटी—मुझे यह कहने में कुछ भी संकोच नहीं

है कि दोहावली में कल्पना और अनुभूति का जितना सजीव चित्रण हुआ है, उतना आधुनिक ब्रजभाषा के किसी भी ग्रंथ में नहीं। यह आधुनिक ब्रजभाषा में सर्वोत्कृष्ट रचना है। विशेषता तो यह है कि इस दोहावली में ब्रजभाषा ने नवीन युग की भावना उतने ही सौंदर्य से प्रदर्शित की है, जितने सौंदर्य से राधाकृष्ण के शृंगार की भावना। इसमें संदेह नहीं कि आपकी यह कृति अमर रहेगी। ब्रजभाषा में लिखनेवाले आधुनिक कवियों के लिये दुलारे-दोहावली आदर्श रचना होगी।

(१३) कविवर श्रीयुत गुरुभक्तसिंहजी 'भक्त' बी० ए०, एल्-एल्० बी०—खड़ी बोली के इस युग में ब्रजभाषा में कविता लिखकर आपने ब्रजभाषा के स्वर्णयुग के कवियों से सफलता-पूर्वक टक्कर ली है। आपके दोहे पद-लालित्य, अर्थ-गौरव, शब्द-सौष्ठव एवं माधुर्य में कहीं तो महाकवि बिहारीलाल के समकक्ष और कहीं बढ़कर ठहरते हैं। इस दोहावली को देखकर क्या अब भी कोई कह सकता है कि ब्रजभाषा Dead Language हो चली है।

सहज बिमल सित किरण-सी पदावली प्रतिएक—
बुध-बिचार घन लहत ही प्रगटत रंग अनेक।
कण-से लघु यद्यपि लगैं दोहे सरस अखंड,
विश्लेषण के होत ही प्रगटे शक्ति प्रचंड।

(१४) कविवर 'बिस्मिल' इलाहाबादी—

बिहारी-सतसई से कुछ नहीं कम—
दुलारेलाल की दोहावली भी।

(१५) कविराज पं० गयाप्रसाद शास्त्री, राजवैद्य, साहित्याचार्य, आयुर्वेद-वाचस्पति, भिषग्रत्न 'श्रीहरि'—

ऊख मे, पियूख मे न पाई सुर - रूखहू मै
दाख की न साख त्यो सिताहू सकुचाई है ,
सीठी भई मीठी बर अधर-सुधा हू जहाँ ,
मद परी कद की अमद मधुराई है।
पीते रहे ही ते, पर रीते अनरीते रहे ,
जानि न परै धौ यह कौन-सी मिठाई है ,
'श्रीहरि' अनोखी, चोखी, उक्ति-जुक्ति भाव-भरी,
कोई कल कामिनी कि कबि-कबिताई है।

(१६) ब्रजभाषा के प्रसिद्ध कवि श्रीश्यामनाथजी 'द्विज-श्याम'—

सुधुनि, सुलच्छन, गुन-भरे, भूषन-धरे, रसाल ,
शत दोहा रचि सत सुयश लह्यो दुलारेलाल।

(१७) ब्रजभाषा के कविवर प० उमाशकर वाजपेयी 'उमेश' एम्० ए०—I am extremely delighted with its freshness, strength, originality and in my opinion it is a work of permanent interest, wonderful power and marked genius You have originated a new style of your own in Brija Bhasha and I consider you to be the Poet of the foremost rank.

(१८) कविवर श्रीलक्ष्मीशकर मिश्र 'अरुण' बी० ए०—आधुनिक ब्रजभाषा की पुस्तकों मे इस दोहावली का सर्वश्रेष्ठ स्थान है। सभी दोहे सुदर और सुललित हैं। विषय-निर्वाह, पद-योजना, ध्वनि और अलंकार के लक्षणो से युक्त इस रचना का हिंदी-ससार यथेष्ट आदर करेगा, ऐसा मेरा विश्वास है। आपकी भाषा में सरसता है,

प्रवाह है, और एक अनूठापन है, जो प्राचीन कवियों की रचनाओं मे भी पूर्ण रूप से नहीं मिलता। बिहारी और मतिराम के दोहों से भी आपके कुछ दोहे, भाव और सरसता की दृष्टि से, बहुत बढ़ गए हैं। चमत्कार और मौलिकता आपकी रचनाओ का प्रधान गुण है। आशा है, आपकी दोहावली ब्रजभाषा-साहित्य के भाडार का एक अति उज्ज्वल रत्न बनेगी।

(१९) ब्रजभाषा के कविश्रेष्ठ पं० शिवरत्नजी शुक्ल 'सिरस'—रूपकालकारादि से दोहे पूर्ण हैं। आपने बिहारी के साथ कविता की समानान्तर रेखा खींची है। सकुचित स्थानो मे, जहाँ कहीं आप बिहारी से मिलते देख पडते हैं, वहाँ भी आपने भिन्न भावाकन के साथ पृथक् ही रहने का अच्छा प्रयास किया है। आपके दोहो मे भाव बढ़िया हैं, और वे अनुप्रास तथा यमक से जगमगा रहे हैं। दोहा की सकरी गली मे साधारणत सिकुडकर चलना पडता है, पर वहाँ भी आपने कविता को भूषित वेश मे निकाला है।

(२०) कविवर प० हरिशकरजी शर्मा—कितने ही दोहे तो बडे गज़ब के हैं। उनमे चमत्कार-पूर्ण प्रतिभा और कवित्वमय मौलिकता है। खडी बोली के आधुनिक युग में, ब्रजभाषा की ऐसी रुचिर रचना, वास्तव मे, अभिनन्दनीय है। दृढ़ विश्वास है कि विश्व-विश्रुत ब्रजमाधुरी आपको, इस सुधास्पदिनी कोमल-कात पदावली के लिये, अपना अमोघ आशीर्वाद प्रदान करेगी।

४. अँगरेजी-विद्वानों की राय

(१) विद्वद्वर प्रोफेसर जीवनशंकरजी याज्ञिक एम्० ए०, एल्-एल्० बी०, अँगरेजी-अध्यापक काशी-विश्वविद्यालय—'दुलारे-दोहावली' एक अनोखी चीज़ है। कोई माई का लाल ब्रज-भाषा की क्षीण और उपेक्षित शक्ति को फिर से चमका देगा, ऐसी

आशा नहीं रह गई थी। श्रीभार्गवजी छिपे रुस्तम निकले। सफल संपादक से बढ़कर कवि निकले। और, वह भी कैसे कि उनकी तुलना बिहारी से की जाती है! धन्य उनका सफल प्रयास और धन्य उनकी अमर कृति!!

भविष्य में इस युग का नाम 'दोहावली' से निश्चित हो, तो कोई आश्चर्य नहीं। इस अनमोल हार को पाकर आज मातृभाषा गौरव को प्राप्त हो रही है।

'दोहावली' की चर्चा करते हुए हमें तो गीता का श्लोक याद आता है—

आश्चर्यवत्पश्यति कश्चिदेन-
माश्चर्यवद्वदति तथैव चान्यः,
आश्चर्यवच्चैनमन्यः शृणोति
श्रुत्वाप्येनं वेद न चैव कश्चित्।

इससे अधिक क्या कहा जाय, और जो कुछ भी कहा जाय, वह ऐसे रत्न की प्रशंसा में अत्युक्ति-दोष से दूषित नहीं हो सकता। बड़े सौभाग्य से अपने जीवन में ऐसी रत्नावली देखने को मिलती है।

(२) प्रोफेसर अमरनाथ झा (प्रयाग-विश्वविद्यालय में अँगरेज़ी-विभाग के अध्यक्ष)—'दोहावली' पढ़कर चित्त बहुत प्रसन्न हुआ। बहुत दिनों पर ऐसी कविता पढ़ने का अवसर मिला। बिहारी ने दोहा को ऐसे उच्च शिखर पर पहुँचा दिया था कि कवियों को उनका अनुकरण दुःसाध्य मालूम होने लगा था। आपने 'दोहावली' लिखकर यह प्रमाणित कर दिया कि इस युग में भी, ब्रजभाषा में, सभी प्रकार के भाव, सभी भाँति के विषय, गूढ़-से-गूढ़ तत्त्व, जटिल-से-जटिल समस्याएँ दोहा में सुचारु रूप से व्यक्त करने की योग्यता आपमें है।

पुस्तक जिस विलक्षण सजधज से निकली है, उसी ठाट की कविता भी है।

(३) हिंदी के श्रेष्ठ कवि और आलोचक प्रोफेसर शिवाधारजी पांडेय (अँगरेजी-अध्यापक प्रयाग-विश्वविद्यालय)—What I came across, however, was equal to anything of the type in our literature

५. पत्र-पत्रिकाओं की राय

(१) हिंदी का सबसे अधिक उपकार करनेवाली संस्था दक्षिण-भारत-हिंदी-प्रचार-सभा का मुख-पत्र 'हिंदी-प्रचारक'—यह पुस्तक इस बात का प्रमाण है कि खड़ी बोली के इस युग में भी ब्रजभाषा का महत्त्व कम नहीं हुआ है। भाषा, भाव तथा कल्पना, सब दृष्टियों से इसके दोहे सर्वोत्कृष्ट कहे जा सकते हैं। कुछ दोहे तो ऐसे उतरे हैं कि उन्हें पढ़-पढ़कर भी जी नहीं भरता और फिर पढ़ने की इच्छा होती है। कई दोहे तुलना में कवि बिहारीलाल के दोहों की टक्कर के हैं, इसमें जरा भी संदेह नहीं।

(२) हिंदी की सुप्रसिद्ध पत्रिका 'चाँद'—दोहावली के दोहे निस्संदेह बहुत अच्छे हैं। उनमें पद-लालित्य, अर्थ-चमत्कार, सूक्ष्म कल्पना, भाव-गंभीरता, रस और अलंकार, सभी कुछ मिलता है। इन दोहों की रचना करके कविवर श्रीदुलारेलालजी ने अपनी प्रखर एवं असाधारण कवित्व-प्रतिभा का परिचय दिया है। 'दुलारे-दोहावली' के पढ़ने में प्रायः वही आनंद मिलता है, जो 'बिहारी-सतसई' के पाठकों को प्राप्त होता है। 'दोहावली' एक मुक्तक काव्य है। बहुत-से दोहे शृंगार-रस-पूर्ण होते हुए भी अश्लीलता के दोष से सर्वथा मुक्त हैं। शृंगारात्मक दोहों के अतिरिक्त, प्रस्तुत

काव्य-ग्रंथ में, धार्मिक, सामाजिक तथा राष्ट्रीय विषयों के आधार पर रचे हुए कुछ दोहे भी वर्तमान है।

इस प्रकार के उत्कृष्ट दोहे पुस्तक मे भरे पडे है। रूपक-अलकार का आश्रय लेकर कवि ने विविध विषयो का वर्णन बड़े चित्ताकर्षक ढग से किया है। ब्रजभाषा का अवलबन कर आधुनिक काल में इस प्रकार की सरलता एव ललित रचना करके कविवर श्रीदुलारेलालजी ने वास्तव मे बडे कमाल का काम किया है।